

# हिन्दुत्व

एक दृष्टि और जीवन पद्धति





**COLLECTION OF VARIOUS**  
-> **HINDUISM SCRIPTURES**  
-> **HINDU COMICS**  
-> **AYURVEDA**  
-> **MAGZINES**

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

**Made with**



**By**

**Avinash/Shashi**

**(creator of  
hinduism  
server)**



**KAPWING**

## अनुक्रमणिका

अध्याय	पृष्ठ क्र.
I. आदर्श हिन्दू घर	
1. हिन्दू घर	7
2. बहिरंग	11
3. अंतरंग	17
II. हिन्दुत्व - एक दृष्टि और जीवन पद्धति	
1. हिन्दुत्व.....	33
2. हिन्दू	42
3. हिन्दुस्थान	45
4. हिन्दुत्व	47
5. हिन्दू विचार की श्रेष्ठता	50
III. हिन्दू संस्कृति और पर्यावरण	
1. हिन्दू संस्कृति और पर्यावरण	55





## भारतीय मनीषियों

द्वारा परिवार में सुसंस्कार देने की ठोस, गहरी  
 एवम् व्यापक व्यवस्था विश्व भर में अनुपम और  
 अद्वितीय है। यह भारत का विश्व को अनमोल वरदान  
 है। आज विश्व टूटते हुए परिवारों के जिस संक्रास में  
 से गुजर रहा है, उसमें जगत् का उद्धार इसी व्यवस्था  
 में से हो सकता है। पुनः उन्नति और सुखशान्ति के  
 मार्ग पर वह भारत की इसी परिवार संकल्पना  
 का आधार ग्रहण कर  
 चल सकता है।



## हिन्दू घर

इंग्लैण्ड में मकर संक्रान्ति के पर्व पर आयोजित हिन्दू स्वयंसेवक संघ के एक कार्यक्रम में तत्कालीन प्रधानमंत्री मार्गरेट थेचर ने हिन्दू संयुक्त परिवार एवं पारिवारिक जीवन मूल्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए, विवाह विच्छेद एवं टूटते परिवारों के कारण इंग्लैण्ड के सामाजिक जीवन में जो चुनौतियाँ खड़ी हुई हैं उनके समाधान हेतु हिन्दुओं से ब्रिटिश समाज को इन जीवन मूल्यों के प्रशिक्षण की आवश्यकता प्रतिपादित की।

दूसरी ओर अपने देश के समाज जीवन में इन पारिवारिक मूल्यों का क्षरण हुआ है जिसके परिणामस्वरूप - वृद्धाश्रमों की संख्या गत सौ पचास वर्षों से भारत में बढ़ती जा रही है। संभव है कि अधिकतर जिलों में अब तक वृद्धाश्रम बन गए होंगे।

अभी तक ये वृद्ध लोग अपने अपने परिवारों में रहकर अपनी वृद्धावस्था बिताते थे, किन्तु अब उनका परिवार में रहना कठिन हो गया है। भारतीय परिवारों का इतिहास गत हजारों वर्षों से आज तक सातत्य से चलता आया है। इससे पहले कभी भी भारत में वृद्धों को अपना परिवार छोड़कर वृद्धाश्रम में रहने की परिस्थिति नहीं आयी थी। वृद्धाश्रम की कल्पना भारतीयों ने पश्चिम से ली है। भारत पर विदेशियों के आक्रमण गत ढाई हजार वर्षों से चलते आए हैं। किन्तु अँग्रेजों से पहले के किसी विदेशी आक्रमणकारी के प्रभाव से भारतीय परिवार का व्यवहार इतना प्रभावित नहीं हुआ था, जितना अँग्रेजों के आक्रमण से हुआ। केवल वृद्धाश्रमों की संख्या ने ही नहीं अपितु विवाह विच्छेदों की संख्या में भी अधिकाधिक गति से वृद्धि हो रही है। परिवार के सदस्यों में स्वार्थ के अधिकार के झगड़े बढ़ते जा रहे हैं। राम-भरत जैसा भारतीयों का आपस में भाईचारे का व्यवहार देशभर में घटता जा रहा है। प्रेम सौहार्द का स्थान ईर्ष्या और कटुता ले रही

हैं। पाश्चात्यों की संस्कृति भौतिकता प्रधान और व्यक्ति केंद्रित है, उससे भारतीयों का व्यवहार प्रभावित होने से पारिवारिक व्यवहार में परिवर्तन आ रहा है। हिन्दू परिवार विषयक इस लेख में हम आज के पश्चात्यों से प्रभावित तथा पहले के हिन्दू परिवारों का विचार करेंगे।

### भारतीय परिवार छोटे हो रहे हैं

आजकल भारत में परिवार शब्द सामने आते ही सर्वसाधारण भारतीय के मनःचक्षु के सामने जो चित्र खड़ा होता है, वह है सरकार के परिवार नियोजन विभाग द्वारा प्रकाशित किये गए भित्तिपत्रक का। उसमें एक पति-पत्नी और उनके एक कुमार और एक कुमारी दर्शाए गए हैं। परिवार नियोजन विभाग के ही चालीस वर्ष पहले के विज्ञापन में दो के बदले तीन बच्चे दिखाए जाते थे। ये दोनों चित्र जिसके स्मरण में हैं ऐसे एक सवाने व्यक्ति ने अपनी ही आयु के एक दूसरे व्यक्ति से पूछा 'और चालीस वर्ष पश्चात् इस विभाग के विज्ञापन में क्या केवल एक ही बच्चे का चित्र दिखाया जाएगा?' दूसरे ने जवाब दिया 'एक बच्चे को भी दिखाने की जरूरत नहीं रहेगी।' भारत में विवाह-विच्छेदों की संख्या में होने वाली वृद्धि की गति को देखते हुए उस व्यक्ति को टिप्पणी सार्थक लगती है।

पचास सौ वर्षों पहले के भारतीय परिवार की कल्पना, फिर वह गरीब हो या धनवान, पढ़ा लिखा हो या अनपढ़, देहाती हो या नगरवासी, 'हम दो हमारे दो' तक सीमित नहीं थी। उसके परिवार की कल्पना में परदादा-परदादी, परनाना-परनानी, ताऊ-ताई, चाचा-चाची, बुआ-फूफा, भाई-भाभी, बहन-बहनोई, ननद-ननदोई, साला-सलहज, साली-साडू आदि सभी रिश्तेदार आते थे। इतनी विशाल संख्या वाले परिवारों से युक्त भारतीयों का समाज-जीवन गत हजारों वर्षों से सतत चलता आया है। इस कारण यह मानना होगा कि भौतिक सुख संपत्ति के साधनों की योग्य व्यवस्था उपलब्ध थी, परिवार सुखी व समृद्ध थे और मन शान्तियुक्त और पूर्णतया संतुष्ट थे। इस वस्तुस्थिति के कारण गत कुछ वर्षों से अनेक पाश्चात्य विद्वान भारतीय परिवार व्यवस्था का अध्ययन कर भारतीयों के संतोष और शान्ति पूर्ण दीर्घ समाज जीवन का रहस्य जानने का प्रयत्न कर रहे हैं।

### परिवार छोटा होने से सुखी होगा क्या?

"हम दो हमारे दो" वाले विज्ञापन के साथ-साथ और लिखा रहता है "छोटा परिवार-सुखी परिवार"। इस सुख में आर्थिक सुख की कल्पना प्रमुख होती है। प्रचार किया जाता है कि परिवार छोटा रहने से परिवार के भरण पोषण के लिए व्यय कम लगेगा और उससे परिवार को सुख मिलेगा किन्तु क्या यह बात सही है? अमेरिका में अनाज के मूल्य कम न हों इसलिए अनाज जलाया जाता है। इतनी भौतिक समृद्धि होने पर भी वहाँ के व्यक्ति सुख और शान्ति से वंचित क्यों हैं?

ऐसे समय में विश्व का ध्यान हिन्दू परिवार व्यवस्था की ओर जा रहा है। अतः हिन्दू परिवार व्यवस्था के संदर्भ में जिज्ञासा होना स्वाभाविक है।

### परिवार की उत्पत्ति विकास एवं विशेषता :-

हिन्दू जीवन में माना गया है कि सृष्टि के प्रारंभ में एक परमात्मा ही था। उसमें एक स्फुरण हुआ। 'एकोऽहं बहुस्याम' 'एक हूँ अनेक बन जाऊँ'। कहते हैं इस संकल्प के परिणामस्वरूप बहुत होने की प्रक्रिया में परिवार की रचना हुई।

परिवार से समुदाय बनाना, उसमें मेलजोल बढ़ाना, उन्नत संस्कारों से युक्त उत्तम व्यक्ति का निर्माण करना, अड़ौस-पड़ौस के व्यक्ति, पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, पत्थर-मिट्टी आदि सब चराचर के साथ आपसी सहयोग से आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करना, 'अहं' की स्वार्थ भावना का क्षरण करते हुए, 'वयं' के समष्टि भाव का वर्धन करना..... इन सब बातों में हिन्दू कुटुंब की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण है।

ऐसे उत्तम कुटुंब में पालन-पोषण होने पर व्यक्ति में आपसी स्नेह, सहकार, विश्वास आदि सदगुणों का संवर्धन होता है। साथ ही साथ, कठिन प्रसंगों में दूसरों की भलाई के लिए, अपने में सहनशीलता तथा अपने को दूसरों से अधिक महत्त्वपूर्ण न मानते हुए समस्त परिवार के समग्र हित सोचने की मानसिकता भी विकसित होती है। इससे भी बढ़कर, 'मैं ही सही हूँ' इस दुराग्रह के स्थान पर अन्यो का अभिप्राय भी सही हो सकता है - इसका विवेक भी ऐसे हिन्दू घरों की विशेषता होती है।

आज विश्व स्वार्थ में डूबा है। इस कारण संदेह, द्वेष, एवं हिंसा बढ़ी है। संघर्ष ही जीवन क्रम बन रहा है। शोषण को ही संस्कृति माना जा रहा है। 'क्या यह

सही है?' पूछने पर 'सही नहीं है' ऐसा बताते तो हैं। लेकिन 'सही क्या है?' इसका उत्तर मिलता नहीं।

ऐसी अवस्था में 'हिन्दू कुटुंब' एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में सबका ध्यान आकृष्ट कर रहे हैं। इनकी विशालता केवल उनकी संख्या में नहीं, अपितु हृदयों में है। सहृदयता एवं आत्मीयता के भावबंधनों से संबंधित कुटुंब याने बच्चों के लिए चेतना-दिशा-विश्वास तथा शौर्य प्रदान करने वाला गुरुकुल है, युवकों के लिए स्वयं सुखी हो कर घरवालों, देश तथा विश्व सुख के लिए परिश्रम करने की तपोभूमि है और वृद्धों के प्रति छोटी-छोटी आदर गौरव के साथ स्नेहभरे व्यवहार का आश्रय है।

इस प्रकार के परिवार बनाने की दृष्टि से घर की सजा घर में संस्कार देने की पद्धति तथा उसमें घर के सदस्यों की भूमिका, घर के विभिन्न सदस्यों की मानसिकता आदि बातों का हमारे यहाँ गहराई से विचार हुआ है। अतः हिन्दू परिवार व्यवस्था के बहिरंग और अंतरंग दोनों पहलुओं पर विचार करने की आवश्यकता है।



## 2

## बहिरंग

देश के विभिन्न प्रांतों में जलवायु की भिन्नता है। अतः घर का बाह्य परिवेश एक समान नहीं हो सकता परंतु जहाँ तक संभव हो निम्न कुछ बातें हो सकती हैं।

### तुलसी - एक संजीवनी

तुलसी का पौधा सब रोगों पर संजीवनी है। उसमें अनेक औषधीय गुण हैं। वह ज्वर-हर, खाँसी-निवारक, चर्मरोग परिहारक है। इस प्रकार तुलसी की उपादेयता की सूची बना सकते हैं। मच्छरों को दूर भगाने की शक्ति इसमें है। इसका ज्ञान अब जगत् को हो चुका है।

हमारे पुरखों ने तुलसी को महत्त्व का स्थान दिया है। घर के आँगन में दाहिनी ओर तुलसी का चबूतरा रहना उचित होता है। नित्य तुलसी पूजन करने की पद्धति भी है। इससे बाहर छोड़ी जाने वाली 'प्राणवायु' बहुत शुद्ध होती है। वह हृदय रोगियों के लिए बहुत परिणामकारी है। उसमें भी वह नारियों के स्वास्थ्य के लिए और भी लाभदायक है। इसी कारण महिलाओं द्वारा सुबह तुलसी पूजन, प्रदक्षिणा करने की प्रथा है।

### नारियल - केला

घर के आँगन में नारियल-सुपारी के न्यूनतम दो-एक पेड़ लगाना उचित होगा। किन्तु यह सब प्रदेशों पर लागू होना संभव नहीं है। जहाँ संभव है, वहाँ अवश्य करें। प्रकृति केवल हमारे लिए नहीं है, हमारे साथ अन्यो के लिए भी है, अतः फल देने वाले पेड़ों को अगली पीढ़ियों के लिए बचाने-बढ़ाने हेतु हमारा



प्रयत्न हो, नारियल तो धरती का कल्पवृक्ष है। कठोर बाह्य कवच के अंदर मीठा फल है। इसके साथ केला भी हो तो और भी उत्तम। केले से भूमि का सत्वांग पूरा निचोड़ा नहीं जाएगा। पानी सूखेगा नहीं। चंपा, कटहल, अनार, पपीता, नींबू, कड़ीपत्ता आदि पेड़ भी बगीचे में लगाए जा सकते हैं। अपने-अपने प्रदेशों के अनुरूप इनमें बदल किया जा सकता है। इनके साथ थोड़ी सी तरकारी, हरी सब्जी भी उगाई जा सकती है। 'इन सब के लिए पानी कहीं से लावें? तो स्नानगृह का पानी इसके लिए उपयोगी हो सकता है। पेड़-पौधों को हर दिन पानी देना केवल उन्हें बढ़ने के लिए ही नहीं, जमीन के स्वत्व को बचाने तथा भूगर्भ के जलस्तर को बनाए रखने के लिए भी उपयोगी है। उस बारे में थोड़ा सोचा तो भी पर्याप्त है।

इस छोटे से बगीचे में बैठने का एक छोटा चबूतरा हो। वहीं बैठ कर बातचीत नहीं तो केवल मौन भी मन को शक्ति प्रदान करता है। पुराने घरों के आँगन में ऐसा चबूतरा जरूर होता था।

## गो-सेवा

पहले हरेक घर में गो-पालन, गो-सेवा ढंग से चलती थी। आज भी ग्रामीण भागों में यह जारी है। गाय को केवल एक चतुष्पादी प्राणी न मानते हुए, गाय याने देवताओं की देवता तथा माताओं की माता है, ऐसी हमारी परंपरागत धारणा है। गौ सब प्राणियों में एक साधु-प्राणी है। घर में मनाए जाने वाले विशेष समारंभों में देहशुद्धि के लिए पंचगव्य (गोमय, गोमूत्र, गोरस, दही एवं घी का मिश्रण) सेवन करना, पुण्य प्राप्ति के लिए गोघ्रास देने तथा गो-दान करने की प्रथा है। गर्भवती महिलाएँ प्रतिदिन विशेष रूप से गो-सेवा करती हैं। गाय का दूध सबके लिए पुष्टिदायक है। वह एक परिपूर्ण आहार है। गोमूत्र में रोगनाशक शक्ति है। आज प्रचलित रासायनिक खाद से भी दस गुना अधिक सत्व जानवरों के गोबर में है, ऐसा अब साबित हो चुका है। अतः गो-पालन एवं गो-संबर्धन सरल साध्य एक अच्छी प्रथा है।

## अलिखित परंपरा

सुबह हवा शीतल होती है। सूर्योदय के समय वातावरण प्रशान्त होता है - छाने वाली धूप, हलचल के साथ कलरव करते पंछी किसी में भी उत्साह भरते हैं।

निद्रा में सहज ही मिलने वाले विश्राम से शरीर के जीवकोश और भी सक्रिय होते हैं। पिछले दिन की थकान पूरी दूर हो कर, मन प्रफुल्लित हो उठता है। तब किसी भी काम के लिए उमंग अपने आप ही जगती है। सुबह जल्दी उठना, वायुसेवन, सूर्यनमस्कार करना, स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है, ऐसा हमारे पूर्वज कह गए हैं। वे सारी अलिखित परंपराएँ हैं। जो किसी लिखित संविधान से भी अधिक बलवती हैं।

## वास्तु नियम

घर का द्वार दक्षिण छोड़ कर अन्य किसी दिशा में हो सकता है। पूर्व अथवा उत्तर दिशा में हो तो बेहतर होगा। अनिवार्य हो तो पश्चिम दिशा में भी हो सकता है। यह संबंधित गाँव, स्थान से जुड़ा हुआ है। पूर्व दिशा की धूप घर में पड़े ऐसी रचना हो। निरंतर कार्य व नियमितता का संकेत देने वाले सूर्य भगवान को हम सहज देख सकते हैं। घर की आग्नेय दिशा में रसोई-भोजन, ईशान्य दिशा में देव-ध्यान कक्ष हो। गृह निर्माण एक कला है। वही वास्तु का विज्ञान भी। आजकल तो वास्तुशास्त्र बहुत जनप्रिय हो रहा है। उसी के अनुसार घर की रचना उचित होगी।

## निर्मल घर - प्रभु का निवासस्थान

छोटा होने पर भी निर्मल एवं सुव्यवस्थित घर सभी को प्रिय होता है। स्वास्थ्य का मूल याने साफ-सफाई, उसकी ओर हमारे पुरखों ने बड़ा ध्यान दिया था। हर दिन सुबह शाम कचरा साफ करना, बुहारने के पहले पानी छिड़कना आदि प्रथाओं की पार्श्वभूमि भी यही है। गोबर-पुताई से विषाणु नष्ट होते हैं, वह अब साबित हुआ है। इस प्रकार पुताई किए जमीन को रंगोली और भी शोभित करती है। सुबह घर के आँगन को रंगोली से सजाना मंगलकारी होता है। रंगोली बाहर से अंदर की दिशा में डालते हैं। और कचरा बुहारना अंदर से शुरू करते हैं। स्वच्छ घर भगवान का आवास है।

घर में विवाह आदि शुभ कार्यों तथा पर्व-त्योहारों में इस प्रकार के अलंकरण का और भी अधिक महत्त्व है - आम्र तोरण, पुष्पमालाओं से घर के द्वारों का अलंकार करने की पद्धति है।

### उदय राग

सुबह ये सारे काम करते समय क्या चुपचाप रहें? सुबह उठ कर अपनी माताओं के मुँह से गीत, भजन, वचन, श्लोक आदि सुनना ही एक भाग्य की बात है। पुराने जमाने में कुछ लोग प्रभात फेरी में भजन का गायन करते हुए रास्तों में घूम कर, सुबह लोगों को जगाते थे। अब तो ध्वनिमुद्रिकाएँ आ गई हैं, तो अब संस्कारप्रद गीत सुबह ऊँचे सुर में सुनने में क्या कठिनाई है?

### नंदादीप - देवगृह

रसोई, भोजन कक्ष, शयन कक्ष आदि यथासंभव अलग हों ऐसी इच्छा होने पर भी स्थान सीमित होने पर समायोजन करना पड़ता है। आजकल कई घरों या बँगलों में जूते-चप्पल रखने के लिए अलग स्थान रहता है। यह अच्छा भी है। पर घर में देव-गृह अथवा ध्यान कक्ष अलग से हो तो और भी अच्छा होगा। वहाँ निरंतर जलने वाला तैल-दीप या निलांजन रहना और भी उचित होगा। देवताओं के चित्र, मूर्ति आदि उच्च पीठ पर रख सकते हैं। पवित्र गंगाजल का कलश, तुलसी - रुद्राक्षी मणिमाला, सालिग्राम भी रख सकते हैं। ये सब साधारण लोगों के मन की एकाग्रता बढ़ाने के लिए सहायक होते हैं। इसके सामने बैठ कर ध्यान, जप, भजन, कर सकते हैं। भगवत कथा, रामायण, महाभारत, संत महात्माओं के जीवन चरित्र, कथाएँ, पुराण धर्मग्रंथ आदि का पठन भी कर सकते हैं। ऐसे चित्रों, ग्रंथों का संग्रह घर में रहना अच्छी बात है। हर दिन सुबह स्नान के बाद थोड़ा समय इसके लिए ही रखना उचित रहेगा।

### त्यौहार मनाना

हर घर में विशेष व्रत-त्यौहारों का आचरण अवश्य होता है। आज इन त्यौहारों की पार्श्वभूमि भुला कर, केवल बाह्य आचरण मात्र रह गया है। नए पकवानों की रसोई, नए कपड़े पहनने तक ही त्यौहार सीमित रह गए हैं। महापुरुषों (राम, कृष्ण, बसवेश्वर, महावीर, बुद्ध, नानक आदि) के जयंती पर्वों पर भजन, प्रवचन, व्याख्यान सुनने की प्रवृत्ति बड़ी अच्छी होती है। महाशिवरात्रि, आषाढ़ एकादशी, जन्माष्टमी एवं अन्य पर्वों पर उपवास करने की पद्धति है। इन दिनों का महत्त्व घर के छोटे-छोटे समझाने का काम बड़ों का है। नहीं तो अर्थहीन आचरण की कुप्रथा बढ़ती जाएगी। अथवा ये सारे रस्मों-रिवाज ही बंद हो जाएंगे।

इन त्यौहारों में सामाजिक हितचिंतन भी निहित है। ऐसे दिन दान करना, नदी स्नान करना, मंदिरों में देवदर्शन आदि क्रियाकलापों के पीछे यही संकेत है।

घर में जब प्यार, स्नेह, अनुकंपा, कर्तव्यपालन आदि उन्नत परंपराओं की रक्षा होती है, तभी वह घर लगता है। अन्यथा आज की भाषा में वह केवल होटल या होस्टल बनता है। अतः घर में साल भर में मनाने-योग्य त्यौहार, व्रत, प्रथाओं की सूची बनाना उचित होगा। हमारे घराने की रीति के अनुसार किस-किस का आचरण करना आवश्यक है उसका उल्लेख उसमें रहे। यही सूची घर की अगली पीढ़ी के लिए उपयुक्त मार्गदर्शक बनेगी।

हमारे घर में क्या कुछ रहना चाहिए, घर कैसा हो इसका निर्धारण अपनी अपनी अभिरुचि, आवश्यकता तथा परिस्थिति के आधार पर ही करें, न कि अन्यो के घरों में जो कुछ है उस आधार पर। अपनी आवश्यकता तय करते समय धर्म का मार्ग न छोड़ें।

हर घर में 'ओंकार' का चित्र हो। वह समस्त जगत् की भलाई का मूर्त रूप है। भारतमाता का भावचित्र भी हो। वह हमारी आराध्य देवता है। अन्य देवी-देवताओं, महापुरुषों, घर के दिवंगत पुरुषों के चित्र भी रहें तो सबको प्रेरणादायी होगा। उत्तम निसर्ग-चित्र, पशु-पक्षियों के चित्र लगाना घरवालों की सदभिरुचि दर्शाती है। चंदन, कुंकुम, हल्दी, गोपीचंदन आदि मंगल द्रव्य घर में हों।

### गृह-प्रकाशी पंचदीप

ऐसे पंचदीपों के बारे में एक ज्येष्ठ व्यक्ति ने कहा है -

• देवता के सम्मुख मंगलदीप, • कुटुंब प्रमुख की दक्षता, • गृहस्वामिनी की प्रसन्नता, • निरालस बालकों का मुक्त खेलकूद-उल्लास तथा • अतिथि-अभ्यागतों का संतोष

इनमें कोई भी दीप धुँधला हुआ तो घर की शांति धूमिल हो जाती है। यह भी उसने बताया है। इसे व्यवहार में लाने हेतु हमारे पूर्वजों ने परिवार में पंच वज्रों की पद्धति बताई थी।

1. ब्रह्म यज्ञ (अध्ययन) 2. पितृ यज्ञ (पुरखों का स्मरण) 3. देव यज्ञ (उपासना) 4. भूत यज्ञ (सृष्टि के सब जीवों की हित चिंतना) 5. मनुष्य यज्ञ (दीन दुःखी की चिन्ता)



घर के बड़ों के मुख्यतया दो दायित्व होते हैं। एक, स्वयं सदैव अच्छी बातें ही सही ढंग से करते रहना। दूसरे, घर के छोटों को सदा सही बातें ही सुव्यवस्थित रीति से करना सिखाते रहना। वे सही बातें सही ढंग से कर रहे हैं, इसका ध्यान रखते हुए, उनसे गलती होने पर उसे प्यार से सुधारना।

सायंकाल में बच्चों को पाठान्तर कराना, एक अच्छी शिक्षा-संस्कार पद्धति है। इससे शुद्ध उच्चार और सही विचार दोनों प्राप्त होते हैं। इसे छोड़ कर अब, निरंतर फिल्मी गाने गुनगुनाने तथा सिनेमा के संवाद ही बड़बड़ाते रहने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। यह ठीक नहीं है। टी.वी. के प्रति लगाव इस सीमा तक बढ़ रहा है कि सामाजिक संबंधों का ताना-बाना टूट रहा है।

उपर्युक्त बातें आज के दौड़-भाग एवं आपा-धापी के जीवन में असंभव लगती हैं। अपने पारिवारिक जीवन पर बदलते समय के हर दुष्प्रभाव को हटाना दुष्कर कार्य लगता है। परन्तु निम्न कुछ बातों पर यदि प्रत्येक परिवार में चिंतन व व्यवहार हो तो शायद इस परिस्थिति को बदला जा सकता है।

1. प्रत्येक परिवार में सायंकाल परिवार के छोटे-बड़े सदस्य भगवान की प्रार्थना साथ-साथ करें।
2. प्रत्येक परिवार के सभी सदस्य दिन में एक बार सामूहिक भोजन करें।
3. सप्ताह में एक बार परिवार के सभी सदस्य परिवार में अपनी संस्कार पद्धति, परिवार के किसी सदस्य की समस्या तथा विभिन्न विषयों पर चर्चा हेतु एक साथ बैठें। इससे मन में उत्पन्न भ्रम भी समाप्त हो सकेंगे, साथ ही परस्पर प्रेम और विश्वास की वृद्धि होगी।
4. जन्म दिन पर केक काटने एवं मोमबत्ती बुझाने के बजाय देवदर्शन, दीप प्रज्वलन हिन्दू पद्धति से करें।
5. परिवार में विवाह पर तड़क-भड़क पर व्यर्थ खर्च न करते हुए सादगीपूर्ण ढंग से करना एवं धन किसी सेवा कार्य हेतु दान देने से समाज में अन्यो को भी प्रेरणा मिलेगी।



## 3

## अंतरंग

### परिवार - संस्कारों का प्रमुख स्थान

भारतीय समाज संरचना में परिवार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण और मध्यवर्ती स्थान है। समाज हितैषी ऋषियों ने आदर्श समाज के लिए जो व्यवस्था, जो सिद्धान्त, जो संस्कार आवश्यक समझे वे उन्होंने परिवार के द्वारा ही देने की व्यवस्था की। संस्कारों का प्रमुख स्थान परिवार ही रहा है और उन्हें अभिप्रेत, आदर्श समाज स्वयं ही साकार हो उठा। उसके लिए अलग से प्रयास करने की आवश्यकता ही नहीं रही।

### परिवार - समन्वित अधिकारों व कर्तव्यों की कर्मभूमि

भारतीय परिवार अस्तांचल सूर्य जैसे अनुभवी वृद्धों से लेकर उदीयमान बाल सूर्य जैसे शिशु तक सभी का एकत्रित स्वरूप होता है, जहाँ पर उसका प्रत्येक व्यक्ति उत्सुकता से अपना कर्तव्य करने को तैयार रहता है। परिवार सबके द्वारा किये जाने वाले अपने अपने कर्तव्यों की कर्मभूमि बनता है। परिवार में अधिकार की कठोर भाषा का नहीं प्रत्युत कर्तव्य की सुमधुर, सुन्दर बोली का साम्राज्य रहता है। महात्मा गाँधी ने एक विदेशी पत्रकार को हिन्दू समाज में किसके क्या अधिकार हैं? इस प्रश्न के उत्तर में कहा था हिन्दू समाज में प्रत्येक के कर्तव्य पालन में दूसरे के अधिकार निहित हैं। बड़े वृद्धों की सेवा करने का अपना कर्तव्य निभाते हुए छोटे लोग अपनी स्वयं की सुख-सुविधाएँ भी भूल जाते हैं। नाना उग्रसेन के कष्ट निवारणार्थ श्रीकृष्ण-बलराम ने अपने जीवन दीव पर लगा दिये। श्रवण कुमार ने काँवड़ में बैठाकर अपने माता-पिता को तीर्थ यात्रा कराई।

केवल पुराण काल में ही ऐसा होता था आज नहीं, ऐसी बात भी नहीं है। सितंबर 1991 में उत्तराखण्ड के चारों धामों (बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री

एवं यमुनोत्री) की यात्रा पर जाना हुआ था। उस समय यमुनोत्री की यात्रा में जयपुर से आए हुए दो भाईयों के दर्शनों का सौभाग्य मिला। एक की आयु लगभग 60 की होगी दूसरे की 50-55 की, दोनों अपनी वृद्धा माँ को यात्रा कराने लाए थे। माँ की इच्छा पदयात्रा की थी। दोनों भाई उस दुर्गम पथ पर माँ को अपने कंधों का आधार दिये इस प्रकार चलाकर ले जा रहे थे जिससे माता के चरण तो धरती का स्पर्श करें किन्तु कँकरीली कष्टमयी भूमि से उसे कोई कष्ट न हो। माता को चारों धर्मों की यात्रा कराने वाले उन दो भाईयों को देखकर हमें कलियुग की जगह सतयुग का स्मरण हो आया। मन पवित्र गौरव से भर उठा, जैसे छोटे लोग बड़ों की सेवासुश्रूषा व उनकी आज्ञा को मानना अपना अहोभाग्य मानते हैं, वैसे ही बड़ों द्वारा छोटी का संगोपन, उनकी अभिवृद्धि, सुसंस्कारों द्वारा उनके व्यक्तित्व का निर्माण आदि को अपना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कर्तव्य माना जाता है। सारी विपत्तियाँ अपने ऊपर झेल कर वे छोटी को उसकी औँच भी नहीं लगने देते। प्रेमपूर्वक कर्तव्य निर्वाह की भावना से जीवन संचालित होने के कारण पारिवारिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह में बोझ होने जैसी थकान या क्लान्ति उत्पन्न नहीं होती, मानसिक शान्ति का अनुभव होता है। अस्तु पारिवारिक जीवन 'भार' नहीं 'सार' बन जाता है। परिणामतः वह परिवार अपने ग्राम के लिये एवं समाज के लिये कर्तव्यों और त्याग का क्षेत्र हो जाता है। जो एक राष्ट्र को सुनियंत्रित रूप से चलाने के लिए आवश्यक है।

### परिवार प्रमुख

पारिवारिक जीवन के केन्द्र में 'मैं' और 'मेरा' नहीं 'अपना' की आत्मोप भावना सब सदस्यों को प्रेमसूत्र में बाँधे रहती है। परिवार प्रमुख कौन हो इसके लिए झगड़े नहीं होते। आयु से ज्येष्ठ व्यक्ति अनकहे, अनबूझे ही कुटुंब प्रमुख के रूप में सबके हृदय में प्रतिष्ठित रहता है। वैयक्तिक योग्यता, क्षमता, प्रतिभा से पद प्राप्ति की स्पर्धा के लिए उकसाया नहीं जाता, प्रत्युत परिवार की सुखसमृद्धि उसके गौरव, उसकी प्रतिष्ठा के लिए सहज रूप से समर्पित करने की प्रेरणा जगाई जाती है। आपसी पारिवारिक प्रेम, महत्वाकाँक्षा को दूषित नहीं होने देता। पारिवारिक क्षेत्र में वैयक्तिक महत्वाकाँक्षा अंकुरित नहीं होती। सावरकर जी ने कहा है 'मैंने जो भी गुण सम्पादित किये हैं, वे इसलिए कि मेरी मातृभूमि गौरवान्वित हो। ज्येष्ठ व्यक्तियों से पहले किसी भी

प्रकार की सुख-सुविधाओं का उपभोग अनुचित है यह मान्यता वैयक्तिक अहं को जन्मने नहीं देती।'

प्रत्येक ज्येष्ठ को अपने कनिष्ठ की चिंता रहती है। हर कनिष्ठ अपने ज्येष्ठ में पूर्ण विश्वास रखता है - उसपर निर्भर रहता है। प्रेम व विश्वास के ये तंतु अत्यन्त सुकोमल होने पर भी ऐसे दृढ़ हैं कि आजतक ये परिवारों को बाँधे हुए चल रहे हैं। प्रत्येक सदस्य को विचार स्वातंत्र्य प्राप्त रहता है। विचार स्वातंत्र्य के मूल में भी परिवार की मंगल-भावना स्थित होने के कारण व्यक्ति उच्छ्वेगल नहीं बनता अपितु सुसम्बद्ध रूप से पारिवारिक निर्णयों के प्रति पूर्णतया समर्पित रहता है। परिवार में किसी भी समय किसी भी कठिनाई के निराकरण हेतु मुख्य व्यक्ति के निर्णय को ही प्रधानता दी जाती है। आयु की ज्येष्ठता और अनुभव की श्रेष्ठता मन का संतुलन रखकर समस्याओं से तटस्थ रूप से जूझने की क्षमता प्रदान करती है। आयु से कनिष्ठतम भी यदि प्रतिभा और विवेक में ज्येष्ठ हो तो उसकी सम्मति का भी पूरा ध्यान रखा जाता है। राजधानी मथुरा से द्वारका स्थानांतरित करने के श्रीकृष्ण के अतिशय महत्त्वपूर्ण परामर्श को उग्रसेन आदि सभी सेनानियों ने निर्णय का रूप दिया। अग्रपूजा के प्रश्न पर सहदेव की राय सर्वमान्य हुई। तात्पर्य यह कि परिवार का मुखिया मदांश नहीं हुआ करता, उसका स्थान और कार्य शरीर में मुख के स्थान के समान है।

मुखिया मुख सा चाहिये खानपान में एक।

पाले पोसे सकल अंग तुलसी सहित विवेक।।

### नई बहू परिवार की साम्राज्ञी हो - ऋग्वेद

परिवार में जो नई बहू आती है उसका परिवार में विशेष स्थान है - ऐसा ऋग्वेद में कहा गया है। उसका अधिकार परिवार के बड़ों सहित संपूर्ण परिवार पर होना चाहिए और आगे चलकर वह गृहस्वामिनी बननी चाहिए। परिवार के वृद्धजन उसे जो आशीर्वाद देते हैं, वह निम्नानुसार है -

सम्राज्ञी शशुरे भव, सम्राज्ञी स्वर्धा भव।

ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधि देवेषु।।

(ऋग्वेद 10-84-46)

हे पुत्री शशुरों की दृष्टि में तुम महारानी बनो, सास की दृष्टि में महारानी बनो, नन्द की दृष्टि में महारानी बनो और देवों की दृष्टि में महारानी बनो। हमारा

यही आशीर्वाद है, यह शुभकामना है, यही हमारी शिक्षा और यही हमारा उपदेश है।

18-20 वर्ष आयु वाली एक कन्या जो पति के परिवार में पहली ही बार प्रवेश करती है उसमें ऐसा परिवर्तन असंभव सा लगता है। किन्तु परिवार के सुचारु संचालन और नवागता को योग्य संस्कार देने के लिए भारतीयों ने इसे आवश्यक माना और यह गुण उसमें विकसित करने का दायित्व परिवार के बड़े लोगों और नई बहू दोनों पर डाला गया है। अनुभव है कि ऐसा परिवर्तन संभव होता है। बड़े अपने आत्मीय व्यवहार से नई बहू का मन जीत लेते हैं और इन बड़ों के साथ अपना दिल खोलकर बहू बोलने लगती है। स्वयं बहू भी परिवार के साथ एकरस होने का प्रयत्न करती है। वैसा करना कहने जितना सरल नहीं है।

हिन्दुओं में प्रत्येक व्यक्ति के संपूर्ण विकास के लिए सोलह संस्कारों की योजना रहती है। उसमें विवाह तेरहवाँ संस्कार है। ये तेरह संस्कार माता के घर में होने के पश्चात् बहू का परिवार बदलता है। फिर भी परिवार के हित को व्यक्ति जीवन में प्रमुख स्थान देने के भारतीय संस्कार के कारण नए परिवार में बहू ऐसे धुलमिल जाती है जैसे दूध में शक्कर। नए परिवार की परंपराएँ तथा परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव से सुपरिचित होने का प्रयत्न वह करती है और प्रत्येक व्यक्ति का मन परिश्रम पूर्वक जीत लेती है। अपने जन्म कुल से उत्तम संस्कारों का वह पति कुल में ऐसा सुंदर विनियोग कर देती है कि पति कुल श्रेष्ठता और अधिक दैदीप्यमान हो उठे। अपनी वैयक्तिक पहचान बनाए रखने के लिए वह संघर्षशील नहीं रहती। जैसे निसर्ग उत्तमोत्तम नवनिर्माण के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देता है, उसी प्रकार की श्रेष्ठशक्ति के रूप में यह नवीन बहू अपने को तैयार करती है, और नए परिवार को अपने गुण और योजनाओं से सरस बना देती है।

प्रत्येक परिवार की अपनी विशिष्ट परंपरा अपनी आचार पद्धति, अपनी व्यवहार प्रणाली होती है। एक परिवार जिन विशिष्ट गुणों को पौढ़ी दर पौढ़ी सँजोए रखता है, बनाए रखता है वे उस परिवार का कुलव्रत बनते हैं जैसे रघुकुल का व्रत है 'रघुकुल रीति सदा चलि आई, प्राण जाय पर वचन न जाई।' इस कुल के व्रत के निर्वाह की शिक्षा विशेष शैक्षिकवर्ग में नहीं दी जाती, अन्यो को देखकर उनके उदाहरणों से नए लोग सीख लेते हैं, इससे परिवार के बड़ों की भूमिका का जैसा महत्व है वैसा ही महत्व कुलस्त्रियों द्वारा प्रदत्त अनुपम योगदान का भी है। वचन निष्ठा का रघुकुल की दृढ़ता दिलीप, रघु, दशरथ सभी में मिलती है और परंपरा से आता यह कुलगुण श्रीराम में विशेष रूप से प्रकट हुआ मिलता है, जिसमें उनकी माताओं का भी हाथ रहा है। सन्तानों

का जीवन अंकुरित होने पर माताएँ उनको पुष्पित पल्लवित करती हैं।

### सबकी शक्ति का उपयोग परिवार के श्रेयार्थ, प्रेयार्थ नहीं

परिवार में नाना प्रकार के कार्य रहते हैं। धनोपार्जन, गृहव्यवस्था, बालकों का संगोपन, शिक्षा-दीक्षा, समाज में व्यवहार आदि। परिवार का प्रत्येक सदस्य अपनी क्षमता और योग्यतानुसार कोई न कोई कार्य स्वयं ले लेता है। उत्तरदायित्व का कोई लिखित आदेश नहीं होता। उत्तरदायित्व न निभाने पर कोई दण्ड विधान भी नहीं है। किन्तु युगों युगांतरों से भारतीय परिवार के सदस्य को उनके कर्तव्य का स्मरण कराना नहीं पड़ता। सास का 'कर्तव्य भार' बड़ी बहू बिना कहे ही ले लेती हैं। जेठानी के कार्य में देवरानी पूर्ण सहकार्य करती है। जेठ-जेठानी की सन्तानों को देवर-देवरानियों की ममता भरपूर मिलती है। प्रायः बच्चे अपने चाचा-चाची का अनुकरण करते हुए माता-पिता को भाई-भाभी ही कहने लगते हैं। कुछ वर्षों के भीतर ये ही बच्चे अपने चाचा के नन्हे-नन्हे बच्चों को उठाने, खिलाने, हँसाने, संभालने में ऐसे पटु हो जाते हैं कि माता-पिता को सन्तान संगोपन का कार्य कठिन प्रतीत नहीं होता। सम्मिलित कुटुंब व्यवस्था में शिशुओं की रमणीय क्रीड़ाओं की यह परस्पर अविच्छिन्न रहती है। परिवार का प्रत्येक सदस्य अपनी क्षमता के अनुसार तथा आवश्यकता के अनुसार कोई न कोई दायित्व स्वयं उठा लेता है। जिस कार्य में उसकी लगन है वह तो उसे दौड़ दौड़ कर करता ही है किन्तु आवश्यकता होने पर जिसमें उसकी रुचि नहीं है वह भी करता है। अपने मन से करता है, प्रेम के साथ करता है और मेरा भी कुछ सहयोग है- इस आत्मगौरव के साथ करता है। जहाँ कम वहाँ हम, यह भावना उसमें अंतर्निहित होती है। -मुझे काम करना पड़ता है' इस भावना की जगह मेरे इस काम से परिवार के लोगों को आनंद होता है यह मनोभूमिका रहती है। परिवार के दो महत्वपूर्ण काम अर्थोपार्जन और गृहव्यवस्था, ये घर के दोनों वर्ग बिना किसी शर्त समझौते के ही कर लेते हैं। सामान्यतया पुरुषवर्ग अर्थोपार्जन का कार्य निभाता है और घर की व्यवस्था, धार्मिक कृत्यों का निर्वहन, सामाजिक सम्बन्धों का निर्वहण आदि सारे कार्य स्त्री वर्ग अपने सकुशल हाथों में सँभाल लेती है।

### अर्थोपार्जन उत्तरदायित्व होता है, अधिकार या उपकार नहीं

भारतीय परिवारों में अर्थोपार्जन के साधनों में 'वैयक्तिक सामर्थ्य कार्य



करता है' किन्तु फलोपभोग में समानता रहती है। परिवार के प्रत्येक सदस्य की उपार्जन क्षमता भिन्न हो सकती है और अपनी क्षमता के आधार पर उसका उपार्जन भी भिन्न हो सकता है। किन्तु आय का पृथक् संचय सोचा भी नहीं जाता है। आय की बड़ी-बड़ी नदियाँ और छोटे-छोटे नाले एक प्रवाह में सम्मिलित हो जाते हैं और देवी सम्पत्ति की सुरसरि परिवार को आप्लावित करती है। 'मैं अधिक कमाता हूँ या मेरी प्राप्त आय' आदि का विचार तक नहीं आता। परिवार में सबकी सम्मिलित आय तथा भरण-पोषण हेतु आवश्यकतानुसार वितरण यह ऐसी सर्वोत्तम आर्थिक व्यवस्था है जिसमें भेदभाव रहित सबको भरण-पोषण, विकास की समान सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। आज का अशक्त कल सशक्त हो कर परिवार की आय को बढ़ाने में अधिक योगदान कर सकता है। 'धनवान और अधिक धनवान' निर्धन और अधिक निर्धन की विषमता से परिवार समाज और राष्ट्र बच जाता है। दुर्बल का पोषण सबल के समान ही होगा तो उसकी कार्यक्षमता बढ़ेगी। आखिरकार वह है तो अपना ही अभिन्न अंग। यह ऐसी प्रबल भावना है जो सबल के मन में स्वार्थ का स्पर्श नहीं होने देती और निर्बल को दीन नहीं बनने देती।

### पारिवारिक व्यवसाय

भारत की सामाजिक अर्थ व्यवस्था की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण विषय है। बाल्यावस्था से ही पारंपरिक व्यवसाय में पारिवारिक वातावरण के अंतर्गत शिक्षित दीक्षित होने से परिवार के बालकों को व्यवसाय की शैक्षणिक प्रणाली सीखने में समय का अपव्यय नहीं करना पड़ता। आज के युवक अपनी आयु का कितना भाग किसी उपाधि को प्राप्त करने में व्यतीत करते हैं और उसके पश्चात् आजीविका के साधनों का अन्वेषण होता है। बाद में भी शक्ति सामर्थ्य का समुचित उपयोग न हो पाने के कारण और अनुचित बड़ी-बड़ी अपेक्षाओं को सँजोने और उनके भंग होने से उत्पन्न निराशा के परिणामस्वरूप जीवन की नीरसता आदि कई अवांछनीय परिणामों से भारतीय परिवार व्यवस्था अपने सदस्यों को बचा लेती है। यही नहीं कई बार पारिवारिक व्यवसाय व्यवस्था से अत्यल्प आयु में ही अप्रतिम प्रतिभा प्रकट हो जाती है।

### परिवार कल आज और कल का सुंदर संकलन

दादा परदादा से युक्त परिवार गौरव की दृष्टि से देखा जाता है। वृद्ध

व्यक्तियों को मिलने वाला आदर और सम्मान वृद्धावस्था को गौरवास्पद बनाता है। प्रत्येक व्यक्ति को वृद्धावस्था प्राप्त होना अनिवार्य होता है। भारतीयों में वृद्धावस्था को अति महत्वपूर्ण और उपयोगी माना गया है। शारीरिक कष्ट के लिये अनुपयुक्त होते हुए भी नन्हें मुत्रों का वे ममत्वपूर्ण आधार रहते हैं। युवाओं का मार्गदर्शन, घर की रखवाली, और पास पड़ोसियों को सलाह देते हुए शारीरिक मानसिक बीमारियों में कुशल सुश्रूषा करते हुए अपने जीवन को एक उपयुक्त केन्द्र बनाकर ये वृद्ध परिवार के आधारस्तंभ बन जाते हैं। परिवार की भारतीय संकल्पना के कारण भारतीय जीवन में 'वृद्धाश्रम' (Old Age Home) जैसी कनिष्ठ दर्जे की अवधारणा नहीं है। दादा-दादी आदि की परिवार में सादर उपस्थिति माता-पिताओं को कितनी ही चिंताओं से मुक्त कराती है। बच्चों की देखभाल उनको संस्कार से युक्त करना जैसे कार्य यह पीढ़ी सहज ही कर लेती है। नानी-दादी के मुँह से सुनी कई कहानियाँ मृत्युपर्यन्त मानव का मनोरंजन करती ही हैं, उसका मार्गदर्शन भी करती हैं। बच्चों की किलकारियाँ, उनकी उमंग और उत्साह भरी शरारतों में सम्मिलित होकर वृद्ध पीढ़ी अपने जीवन के सायंकाल में भी सूर्योदय के समय जैसी स्फूर्ति और जीवन्तता का अनुभव लेती रहती है। परिवार के किसी वृद्ध सदस्य की षष्ठिपूर्ति अमृतोत्सव आदि भारतीय परिवार के महोत्सव हैं।

परिवार की भावी पीढ़ी याने अपने बालकों को इन अनुभवयुक्त वृद्धों को अर्थात् अपने से पहले की पीढ़ी को विश्वास के साथ सौंपकर, मानो अपने भविष्य को अतीत के हाथों सौंपकर युवा याने मंझली पीढ़ी अपने वर्तमान को सुसमृद्ध और बलिष्ठ बनाने में निश्चित मन से जुट जाती है। दूसरी ओर छोटे बालक अपने माता-पिता की कार्यमग्नता के कारण प्रेम से वंचित नहीं रहते। 'कल, आज और कल का सुंदर समन्वय है। जहाँ सम्मान और गौरव प्राप्त वृद्ध कर्तव्यनिष्ठ युवाओं को सहारा देते हुए सुंदर सुमंगलमय, कर्तव्यवान भविष्य का निर्माण कर रहे होते हैं।'

### परिवार संकोच का नहीं विस्तार का विधान

ऐसे आनन्द और उल्लासयुक्त परिवार को भारतीयों ने संकीर्ण नहीं रखा। भारतीय परिवार संकोच का नहीं विस्तार का विधान है। सम्बन्धवाची जितने पद हमारे यहाँ उपलब्ध हैं उतने संभवतः संसार में कहीं भी नहीं हैं। ये पद इस लेख में एक बार दिये गए हैं। हमें अँग्रेजी के समान मैटर्नल (माता से संबंधित), या पैटर्नल (पिता से संबंधित) से विशेषण का काम नहीं पड़ता। प्रत्येक सम्बन्ध

निश्चित सम्बोधन लिये रहता है। परिवार में केवल रिश्तेदारों का ही अन्तर्भाव नहीं रहता, परिवार के पारिवारिक नौकर आदि भी परिवार के सदस्यों का स्थान पाते हैं। नौकरों को रामू काका, लक्ष्मी चाची इस प्रकार सम्बोधित करने की परिपाटी है। पास-पड़ोस या समाज का अन्योन्य वर्ग भी हमारे परिवार के सदस्य सदृश्य ही होता है। परिवार के लिए जिनका सहयोग प्राप्त होता है यथा वैद्य, शिक्षक, दर्जी, सुनार, सुतार, लोहार जैसे सभी लोगों के लिये अपनत्व का भाव रहता है। विवाह आदि उत्सवों में नाई, धोवन, कुम्भकार आदि सभी प्रेम से साधिकार अपना देय पाकर अभिन्नता को प्रमाणित करते हैं।

आकाश की महान शक्तियों से लेकर बिल में रहने वाले प्राणियों तक हम अपने सम्बन्धों को विस्तारित करते हैं। सूरजदादा, चंदामामा, बादलचाचा, बिजली रानी कहकर हम हमारे प्रेमादर की ध्वजा आकाश में फहराते हैं तो बिल्ली मौसी, गय्या मय्या से पृथ्वी तल पर पशु-पक्षियों को भी नाप लेते हैं और चूहे मामा कहकर तथा विषधर सर्प के भी मातृकुल से सम्बन्ध जोड़कर बिल मार्ग से पाताल में भी पहुँच जाते हैं। इस प्रकार नदी, पर्वत, वृक्ष सभी से सम्बन्ध व सम्बोधनों का व्यवहार खेल-खेल में ही विश्वबन्धुत्व की महान भावना का सृजन करता है और संपूर्ण ब्रह्माण्ड के साथ अपने सम्बन्धों को जोड़ कर महामानव बनने का सुगम उपाय उपस्थित करता है।

### विरुद्ध स्वभाव भी परिवार भावना से अनुकूल

अपने-अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का प्रत्येक व्यक्ति विकास करते हुए, एक दूसरे की कल्याण की चिन्ता मन में रखते हुए आवश्यक त्याग से अपना कर्तव्य निभाते हुए एक सुचारु और सुनियंत्रित गुट के रूप में रक्त के अटूट बंधन से बंधे रिश्तेदारों का एकत्र निवास भारतीय परिवार का स्वरूप है। भारतीयों का आदर्श है शिव परिवार जिसमें हैं शिवजी, पार्वतीजी, उनके दो पुत्र कार्तिकेयजी और गणेश जी। चारों एक से एक कर्तृत्ववान, परसेवा या समाजसेवा के लिए नित्य सिद्ध। सब की शक्ति एक प्रवाह के रूप में समाजसेवा में लग गई। शिवजी ने माँ पार्वती को अपना अर्धाङ्ग दे डाला। पति की कार्यक्षमता उसकी विचार शक्ति, उसकी चिन्तनधारा, उसकी उच्चातिउच्च उपलब्धियाँ, उसके धर्म उसके पुण्यों पर सहधर्मचारिणी अर्धाङ्गी का पूर्ण स्वत्व रहता है। एक पुत्र षटमुख तो एक गजानन। शिववाहन वृषभ, शिवानी वाहन सिंह, गजानन का वाहन मूषक तो

षडानन का मयूर। सब का परस्पर जातिगत वैर। सिंह वृषभ (बैल) को खानेवाला तो चूहे (मूषक) को खाने वाला सर्प और उधर मयूर की दृष्टि सर्प पर। परन्तु शिव परिवार में सब अपना वैयक्तिक स्वाभाविक वैर छोड़कर एक मन एक प्राण होकर विश्वकल्याण में लगे रहते हैं और ऐसा क्यों न हो! स्वयं विषपान कर जगत् को अमृत का पान कराने वाले देवाधिदेव महादेव के साथ एक परिवार में रहने पर वैर वैमनस्य का विष भला कैसे रह सकता है।

### आदर्श भारतीय परिवार देशव्यापी

परिवार के सब सदस्यों को मानसिक सुख शान्ति देनेवाले भारतीय परिवार का यह चित्र बहुत आकर्षक और शोभनीय है। स्वार्थ और अधिकार के स्थान पर त्याग और कर्तव्य का महत्त्व प्रत्येक व्यक्ति में निर्माण करने वाली अपनी संस्कृति के कारण ऐसे असंख्य परिवार भारतीय लोगों ने अपने समाज में निर्माण किये हैं। सभी भारतीय परिवार इसी प्रकार से जीवन बिताते थे, यह कहना ठीक नहीं होगा। किन्तु इतना निश्चित है कि ऐसे आदर्श परिवार प्रत्येक गाँव में, प्रत्येक जाति में, जंगलों में, सब भाषा-भाषियों में अर्थात् संपूर्ण देशभर में पर्याप्त संख्या में थे, जिससे प्रत्येक भारतीय ऐसे आदर्श परिवार का प्रत्यक्ष दर्शन कर सकता था। इतना ही नहीं तो उस परिवार के सदस्यों के आपसी सौहार्दपूर्ण व्यवहार का अनुभव कर सकता था। ऐसे परिवार प्रत्येक भारतीय के प्रत्यक्ष रूप से आदर्श हुआ करते थे। अपने परिवार को वैसा आदर्श बनाने के लिये प्रयत्न हुआ करते थे तथा सामने आने वाली प्रत्येक समस्या के लिए उक्त परिवार को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया करते थे।

### भारतीय परिवार व्यवस्था की हानि किंचित्मात्र

गत सौ सवा सौ वर्षों से भारतीय परिवार व्यवस्था को कुछ धक्का पहुँचा है। सदा नींव पर दीर्घ काल से चलने वाली इस परिवार व्यवस्था ने अब तक अनेक विश्व आक्रमणकारियों के सब प्रकार से धक्के सहन किये हैं और यह व्यवस्था अडिग रहते हुए हजारों वर्षों के भारत के इतिहास का पाठ यही कहता है कि वर्तमान का यह धक्का भारतीय विफल करेंगे। पाश्चात्यों के साम्राज्य और शास्त्रीय आविष्कारों के कारण प्रभावित हो कर संभ्रमित मन से भारतीयों ने किंचित् प्रमाण में अलग रास्ता पकड़ा है। उनकी पारिवारिक व्यवस्था को कुछ

ठेस अवश्य पहुँची है। किन्तु भारतीय तथा पाश्चात्यों की भोगवृत्ति का जो परिणाम भारतीयों पर हुआ है इससे अनावश्यक रूप से भयभीत होते हैं और 'कलियुग आया है, सब नाश होने वाला है' ऐसा कहकर उसका अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन कर देते हैं। किन्तु इस प्रकार भयभीत होने का कोई कारण नहीं है। शरीर पर यदि कुछ फोड़े हुए हैं, किन्तु वह रोगी मृत्यु का शिकार न हो, उसके खून में दम हो तो दवाई थोड़े दिनों में फोड़ों को समाप्त करने की दवा जानकार वैद्य बता सकते हैं। वे फोड़ों के धिनीने दर्शन से भयभीत नहीं होते। पाश्चात्य भोगवादी आचार विचार अपनाने वाले भारतीयों के मन पर इन विदेशी संस्कार कि 'भोग भोगने से भोगेच्छा बढ़ती है और वह बढ़कर भोगने वाले का नाश कर देती है' हजारों वर्ष से होता आया है, इस कारण भोगवादी आचार विचार संबंधी अपनी गलती को भारतीय लोग जल्दी ही ठीक कर लेंगे।

### पाश्चात्यों के समाज जीवन के घटनाक्रम से पाठ

'भोगेच्छा भोगने वाले को हुवा देती है, भोगवादी आचार विचार से संबंधित इशारा गत कुछ शताब्दियों से संपूर्ण विश्व को पाश्चात्यों के भोगवादी समाज जीवन का घटनाक्रम ही दे रहा है और जैसे-जैसे समय बीत रहा है उसका इशारा अधिकाधिक गहरा, स्पष्ट और प्रभावकारी होता जा रहा है।

भारतीयों के समान संपूर्ण एकात्म दृष्टि का मौलिक अध्ययन कर उस पर आधारित परिवार व्यवस्था पाश्चात्यों ने अपना लिये वहीं उनकी सम्पूर्ण जीवन रचना का इतिहास हजार-पन्द्रह सौ वर्ष का है। उनके मानव समूह जब विकास की प्राथमिक अवस्था में थे, उसी समय उनके ऊपर ईसाई पंथ का प्रभाव पड़ा और परिणाम स्वरूप उनमें पाप पुण्य की कुछ कल्पनाएँ रूढ़ हुईं। 15-16 वीं शताब्दी से जब उन्होंने भोगवाद अपनाया तब से उनके मन से पाप पुण्य की ये कल्पनाएँ भी समाप्त होती गई। भोगवाद का प्रभाव बढ़ते-बढ़ते उनके व्यक्तिनिष्ठ और भोगवादी विचार अधिकाधिक प्रबल होते गए और पहले जो भी उनकी परिवार व्यवस्था रही होगी वह नष्ट होना प्रारंभ हो गई। व्यक्ति की भोगेच्छा पर अगर पहले कुछ सामाजिक बंधनादि रहे भी होंगे तो ढीले पड़ते गए और अनिवार्य भोगेच्छा को स्वतंत्रता मिली। विवाह अर्थ भोगेच्छा की अनुमति माना गया। विवाह होते ही हनीमून-मधुचंद्र याने शेष परिवार को छोड़कर दोनों को जैसा लगे वैसा आपसी व्यवहार करने की छूट। इससे इस विचार का बीजारोपण हुआ कि शेष

परिवार अपनी आपसी स्वतंत्रता में बाधा है। विशाल परिवार की जिम्मेदारी से व्यक्ति छुट्टी लेने लगा। मेरे माता पिता की भोगेच्छा के कारण मेरा जन्म हुआ है, इसलिए उनकी मुझ पर किसी प्रकार की जिम्मेदारी नहीं है वह विचार प्रबल होकर अनेक 'ओल्ड एज होम्स' याने वृद्धाश्रम बनने लगे।

विवाह होने तक भोगेच्छा संयमित रखना असंभव होने लगा। कंडोम आदि के उपयोग से विवाह पूर्व शारीरिक संपर्क होने लगे। भ्रूण हत्या गलत न मानने के कानून पारित हुए। अमेरिका में वहाँ एक हाईस्कूल देखने के उद्देश्य से जब प्रवेश किया, तो एक ओर के कमरे में अनेक झुल्लों में नन्हें बालक लेटे हुए दिखाई दिये। इस विषय में पूछने पर बताया गया कि उनकी शिक्षा संस्था में पढ़ने वाली अविवाहित बालिकाओं के ये बच्चे हैं। गर्भाधारण रोकने के लिए अन्यान्य असंख्य साधन वहाँ उपलब्ध हैं, और भ्रूण हत्या गुनाह न मानने का सामाजिक व्यवहार रहते हुए भी जन्में नन्हें बालकों की देखभाल करने का काम वहाँ शिक्षा संस्थाओं के जिम्मे आया है। व्यक्तिनिष्ठ और भोगवादी विचारों के परिणामस्वरूप विवाह-विच्छेद बढ़ने लगे हैं। कुछ देशों में तो इसका प्रचलन पचास प्रतिशत हो गया है। विवाह-विच्छेदों के कारण जीवित माँ-बाप की अनाथ संतानों की संख्या बहुत बढ़ गई है। विवाह पूर्व पैदा हुई संतानों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। माता-पिता विहीन संतानें वहाँ के सामाजिक जीवन में अत्याचार, खून, डकैती आदि अनेक समस्याएँ निर्माण कर रही हैं। भौतिक दृष्टि से वहाँ का समाज समृद्ध है। सब प्रकार के सुख और उपभोग के साधन वहाँ उपलब्ध हैं फिर भी परिवार विषयक नैतिकता का वहाँ अभाव है तथा असंयमित भोगेच्छा के कारण वहाँ व्यक्ति असंतुष्ट और त्रस्त रहते हैं।

### पाश्चात्य अर्थ व्यवस्था को खतरे की सूचना

पाश्चात्य समाज का यह मार्गक्रमण आज तेज गति से चल रहा है। परिवार का सहारा जिनको नहीं है, ऐसे अनाथ लोगों की संख्या वहाँ के समाज में बढ़ती जा रही है। वृद्ध तथा अपंग अपनी शारीरिक असमर्थता के कारण अनाथ हैं तो नौकरी या जीवन निर्वाह का साधन न मिलने के कारण युवा पीढ़ी अनाथ है। माँ-बाप के रहते हुए भी माँ-बाप की जानकारी न रखने वाले बालक भी अनाथ हैं। पाश्चात्यों में उनकी समाज व्यवस्था में राज्य (स्टेट) को सब प्रकार की जिम्मेदारी दी गई है। इसलिए इन अनाथों के उदर निर्वाह की जिम्मेदारी भी उनके



शासन पर है। पहले जैसे बताया गया था कि अविवाहित लड़कियों के बच्चों की तथा उन लड़कियों की जिम्मेदारी वहीं के शिक्षण संस्थानों को दी गई है जो शासकीय अनुदानों से चल रहे हैं। इन सभी अनाथों को अपने ऊपर की जिम्मेदारी पूर्ण करने के लिए वहीं की सरकारें बहुत व्यय करती हैं। इंग्लैण्ड से आए एक व्यक्ति ने बताया कि यह व्यय प्रतिवर्ष इतना बढ़ता जा रहा है कि कुछ वर्षों में संपूर्ण बजट इसी काम में खर्च होगा और देश की सब व्यवस्था टूट जायेगी। भोगवादी इंग्लिश समाज को दुबा देगी। जिन को आज प्रगतिशील याने धनवान देश कहा जाता है उनकी ही यदि आज ऐसी दुर्दशा है तो उनके भोगवादी तथा व्यक्तिनिष्ठ विचार अपना कर चलने वाले कम धनवान देशों की क्या स्थिति होगी? और आज विश्व भर में ऐसे देश नब्बे प्रतिशत से भी अधिक हैं।

### संस्कार क्षम परिवार हों : पाश्चात्य के विचार

पाश्चात्य लोग अपनी परिवार संस्था को संस्कार क्षम बनाने की बात को अब बहुत महत्व देने लगे हैं।

इंग्लैण्ड के मनोविज्ञान के विद्वान मायकेल रूटर का मानना है कि मानसिक विकृति, आत्महत्या, अपराध, व्यसनाधीनता, वैफल्यभावना आदि समस्याओं का कारण बेकारी और दरिद्रता नहीं प्रत्युत भंग परिवार ही है।

अमेरिका के रॉयल बैंक ऑफ कनाडा के मन्थली लेटर व्हाल्यूम 58, नं. 10 में एक लेख आया है 'लेट अस प्रिजर्व फैमली लाइफ'। परिवार संस्था को वे सबसे अधिक महत्व देते हैं और मानते हैं कि वह सर्वदा के लिए चलती रहनी चाहिए। उन्होंने परिवार को 'भूतल का स्वर्ग' कहा है। उस लेख के मुख्य बिन्दु हैं-

1. परिवार में प्रेम, स्नेह न मिलने से सबसे अधिक नैतिक और सामाजिक समस्याएँ निर्मित होती हैं।
2. समाज के व्यक्ति पर जो संस्कार आवश्यक हैं वे परिवार में ही मिलते हैं।
3. व्यक्तित्व निर्माण के लिए परिवार ही प्रथम श्रेणी का केन्द्र है।
4. परिवार में परस्पर पूरकता और परस्परावलम्बिता के कारण व्यक्ति-व्यक्ति के बीच के घर्षण को रोकने का व्यक्ति को अभ्यास होता है।

इस प्रकार परिवार को संस्कारक्षम बनाने के ज्ञान की अपेक्षा पाश्चात्य लोग भारत से करते हैं।

### हमारा दायित्व

भारतीय परिवार संस्था अश्वत्थ वृक्ष जैसी सनातन एवं आश्रयदात्री है। इसकी ममता की छाया में अनेकों को सुरक्षित आधार प्राप्त हुआ है, सहज भाव से उनका व्यक्तित्व, कर्तृत्व विकसित हुआ, 'परिवारप्रमुख' की मातृत्व भावना से मंडित आत्मीयता के आंचल में वयस्क, अपाहिज, अनाथ, दुर्बलमन, विद्याभ्यासी समा जाते थे। इसके लिये किसी औपचारिक संस्थाओं के निर्माण की कल्पना भी नहीं थी।

जिन देशों ने अपनी परिवार संस्था का उपहास किया, उसे कालबाह्य माना, अपने देशों में यह व्यवस्था तोड़ दी, उन्हीं देशों को अपनी समस्याओं के समाधान के लिये परिवार संस्था का आधार लेना पड़ रहा है। हमारी परिवार संस्था की शाश्वतता, चिरंतनता एवं हमारे मनीषियों के चिंतन की मौलिकता सिद्ध हुई है।

भौतिकता से ऊब कर आज अनेक लोग निःस्वार्थ प्रेम की खोज में हैं। अपनी परिवार संस्था के सुदृढ़ संस्कार ही उनका भटकाव दूर कर सकेंगे। विश्व कल्याणकारी यह दायित्व नियति ने भारत को सौंपा है।



# हिन्दुत्व

## एक दृष्टि और जीवन पद्धति

## हिन्दुत्व.....

### एक दृष्टि और जीवन पद्धति

'हिन्दुत्व' धर्म का पर्यायवाची है, जो भारत वर्ष में प्रचलित उन सभी आचार-विचारों, व्यक्ति और समाज में पारस्परिक सामाजिक समरसता, संतुलन तथा मोक्ष प्राप्ति के सहायक तत्वों को स्पष्ट करता है। यह एक जीवन-दर्शन और जीवन पद्धति है जो मानव समाज में फैली समस्याओं को सुलझाने में सहायक है। अभी तक हिन्दुत्व को मजहब के समानार्थी मानकर उसे गलत समझा गया था, उसकी गलत व्याख्या की गई, क्योंकि मजहब मात्र पूजा की एक पद्धति है जबकि हिन्दुत्व एक दर्शन है जो मानव जीवन का समग्रता से विचार करता है। समाजवाद और साम्यवाद भौतिकता पर आधारित राजनैतिक एवं आर्थिक दर्शन है जबकि हिन्दुत्व एक ऐसा दर्शन है जो मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं के अतिरिक्त उसकी मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक आवश्यकता की भी पूर्ति करता है। कोई व्यक्ति मात्र सुविधाओं की प्राप्ति से प्रसन्न नहीं रह सकता। हिन्दुत्व एक जीवन पद्धति है जो व्यक्ति को सभी वैध आवश्यकताओं और अभिलाषाओं को संतुष्ट करती है ताकि मानवता के सिद्धांतों के साथ प्रसन्न रह सके।

### उच्चतम न्यायालय की दृष्टि में हिन्दु, हिन्दुत्व और हिन्दुइज्म

क्या हिन्दुत्व को सच्चे अर्थों में धर्म कहना सही है? इस प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय ने - "शास्त्री यज्ञपुरष दास जी और अन्य विरुद्ध मूलदास भूदास वैश्य और अन्य (1966(3) एस.सी.आर. 242) के प्रकरण का विचार किया। इस प्रकरण में प्रश्न उठा था कि स्वामी नारायण सम्प्रदाय हिन्दुत्व का भाग है अथवा नहीं?

इस प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति श्री



गजेन्द्र गड़कर ने अपने निर्णय में लिखा -

“जब हम हिन्दू धर्म के संबंध में सोचते हैं तो हमें हिन्दू धर्म को परिभाषित करने में कठिनाई अनुभव होती है। विश्व के अन्य मजहबों के विपरीत हिन्दू धर्म किसी एक दूत को नहीं मानता, किसी एक भगवान की पूजा नहीं करता, किसी एक मत का अनुयायी नहीं है, वह किसी एक दार्शनिक विचारधारा को नहीं मानता, यह किसी एक प्रकार की मजहबों पूजा पद्धति या रीति नीति को नहीं मानता, वह किसी मजहब या सम्प्रदाय की संतुष्टि नहीं करता है। बृहद रूप में हम इसे एक जीवन पद्धति के रूप में ही परिभाषित कर सकते हैं - इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं।”

रमेश यशवंत प्रभु विरुद्ध प्रभाकर कुन्दे (ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 1113) के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय को विचार करना था कि विधानसभा के चुनावों के दौरान मतदाताओं से हिन्दुत्व के नाम पर वोट माँगना क्या मजहबी भ्रष्ट आचरण है। उच्चतम न्यायालय ने इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर देते हुए अपने निर्णय में कहा-

“हिन्दू, हिन्दुत्व, हिन्दुइज्म को संक्षिप्त अर्थों में परिभाषित कर किन्हीं मजहबी संकीर्ण सीमाओं में नहीं बाँधा जा सकता है। इसे भारतीय संस्कृति और परंपरा से अलग नहीं किया जा सकता। यह दर्शाता है कि हिन्दुत्व शब्द इस उपमहाद्वीप के लोगों की जीवन पद्धति से संबंधित है। इसे कट्टरपंथी मजहबी संकीर्णता के समान नहीं कहा जा सकता। साधारणतया हिन्दुत्व को एक जीवन पद्धति और मानव मन की दशा से ही समझा जा सकता है।”

### अन्तर्राष्ट्रीय शब्दकोष और केरीब्राउन

वेबस्टर के अँग्रेजी भाषा के तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय शब्दकोष के विस्तृत संकलन में हिन्दुत्व का अर्थ इस प्रकार दिया गया है :-

“यह सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक विश्वास और दृष्टिकोण का जटिल मिश्रण है। यह भारतीय उप महाद्वीप में विकसित हुआ। यह जातीयता पर आधारित, मानवता पर विश्वास करता है। यह एक विचार है जो कि हर प्रकार के विश्वासों पर विश्वास करता है तथा धर्म, कर्म, अहिंसा, संस्कार व मोक्ष को मानता है और उनका पालन करता है। यह ज्ञान का रास्ता है, स्नेह का रास्ता है, जो पुनर्जन्म पर विश्वास

करता है। यह एक जीवन पद्धति है जो हिन्दू की विचारधारा है।”

अँग्रेजी लेखक केरीब्राउन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक ‘द इसेन्शियल टीचिंग्स ऑफ हिन्दुइज्म’ में अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त किये हैं -

“आज हम जिस संस्कृति को हिन्दू संस्कृति के रूप में जानते हैं और जिसे भारतीय सनातन धर्म या शाश्वत नियम कहते हैं वह उस मजहब से बड़ा सिद्धान्त है जिस मजहब को पश्चिम के लोग समझते हैं। कोई किसी भगवान में विश्वास करे या किसी ईश्वर में विश्वास नहीं करे फिर भी वह हिन्दू है। यह एक जीवन पद्धति है यह मस्तिष्क की एक दशा है।”

### डॉ. राधाकृष्णन के विचार

डॉ. राधाकृष्णन ने अपनी पुस्तक “द हिन्दू व्यू ऑफ लाईफ” में हिन्दुत्व के स्वभाव का विवरण दिया है।

“अगर हम हिन्दुत्व के व्यावहारिक भाग को देखें तो हम पाते हैं कि यह जीवन पद्धति है न कि कोई विचारधारा। हिन्दुत्व जहाँ वैचारिक अभिव्यक्ति को स्वतंत्रता देता है वहीं वह व्यावहारिक नियम को सख्ती से अपनाने को कहता है। नास्तिक अथवा आस्तिक सभी हिन्दू हो सकते हैं, बशर्ते वे हिन्दू संस्कृति और जीवन पद्धति को अपनाते हों। हिन्दुत्व धार्मिक एकरूपता पर जोर नहीं देता, वरन् आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाता है। इस या उस दृष्टिकोण का अनुयायी कभी भी दुष्ट प्रवृत्ति का अनुगमन नहीं करेगा। वास्तव में व्यावहारिकता, सिद्धांत के पूर्व की स्थिति है। हमारा धार्मिक और आध्यात्मिक चिंतन चाहे जो हो पर इस बात पर सभी सहमत हैं कि हमें अपने हितकारियों के प्रति आभारी और दुर्भाग्यहीनों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करनी चाहिए। हिन्दुत्व सामाजिक जीवन पर जोर देता है और उन लोगों को साथी बनाता है जो नैतिक मूल्यों से बँधे होते हैं। हिन्दुत्व कोई संप्रदाय नहीं है बल्कि उन लोगों का समुदाय है जो दृढ़ता से सत्य को पाने के लिये प्रयत्नशील हैं।”

### धर्म पर उच्चतम न्यायालय का कथन

‘धर्म जिसे ऐतिहासिक कारणों से ‘हिन्दू धर्म’ कहा जाता है वह जीवन के उन सभी नियमों को शामिल करता है जो कि सामाजिक स्थायित्व और सुख के लिये

आवश्यक है। भारत के उच्चतम न्यायालय की ओर से विचार व्यक्त करते हुये न्यायमूर्ति जे. रामास्वामी ने उक्त बात कही (ए.आई.आर. 1996 एल.सो. 1765) -

‘धर्म या हिन्दू धर्म’ सामाजिक सुरक्षा और मानवता के उत्थान के लिए किए गए कार्यों का समन्वय करता है। उन सभी प्रयासों का इसमें समावेश है जो कि उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति में तथा मानव मात्र की प्रगति में सहायक होते हैं। यही धर्म है, यही हिन्दू धर्म है और अन्ततः यही सर्वधर्म समभाव है। (पैरा 81)

इसके विपरीत भारत के एकीकरण हेतु धर्म वह है जो कि स्वयं ही अच्छी चेतना या किसी की प्रसन्नता के वांछित प्रयासों से प्रस्फुटित एवं सभी के कल्याण हेतु, भय, इच्छा, रोग से मुक्त, अच्छी भावनाओं एवं बंधुत्व भाव, एकता एवं मित्रता को स्वीकृति प्रदान करता है। यही वह मूल ‘रिलीजन’ है जिसे संविधान सुरक्षा प्रदान करता है।’ (पैरा 82)

### हिन्दुत्व के प्रधान पक्ष

हिन्दू जीवन पद्धति के अनेक विशिष्ट लक्षण हैं। इसके प्रमुख आयाम इस प्रकार हैं-

(1) **कृतज्ञता** : व्यक्तियों एवं अन्य जीवित प्राणियों के प्रति जो हमारे सहयोगी रहे हैं, कृतज्ञता का भाव रखना, हिन्दू जीवन पद्धति है। ईश्वर के किसी रूप अथवा चुनी गई विधि से उपासना का आधार भी यही भावना है। पुनः यही भावना देवताओं के समान माता, पिता एवं शिक्षक के प्रति आदर का आधार है। पति एवं पत्नी के मध्य अटूट बंधन का आधार भी यही कृतज्ञता की भावना है। पुनश्च, यही कृतज्ञता की भावना पेड़-पौधों एवं पशुओं की पूजा की प्रथा, साथ ही दशहरे के आयुध पूजा के दिन, सभी उपकरणों अथवा औजारों जिनसे हम जीविकोपार्जन करते हैं, की उपासना का आधार है। इस भावना के कारण ही गायों, बछड़ों, बैलों की हत्या को निषिद्ध किया गया है, क्योंकि गाय हमें बाल्यावस्था से मृत्यु तक जीवनदायी दूध प्रदान करती है तथा बैल, कृषि एवं परिवहन में हमारी सहायता करते हैं। हम गाय की पूजा, गौमाता के रूप में करते हैं।

(2) **परोपकार** : दूसरों के प्रति सहृदय होना विशेषकर उनके प्रति जिनको इसकी तत्काल आवश्यकता है। उन्हें भोजन, धन, दवा अथवा अन्य किसी प्रकार की सहायता प्रदान करना ही ईश्वर की सेवा के बराबर है। कहा गया है - नरसेवा

ही नारायण सेवा है।

(3) **अहिंसा** : साथी मनुष्यों एवं अन्य जीवित प्राणियों को शारीरिक अथवा मानसिक चोट नहीं पहुँचाना।

(4) **माता-पिता एवं शिक्षकों के प्रति आदर** : प्रत्येक व्यक्ति को अपने माता-पिता एवं शिक्षक का आदर भक्तिभाव से कर उनकी सेवा ईश्वर के समान ही करनी चाहिये। विशेषतः उसे अपने माता-पिता के अशक्त एवं वृद्ध होने पर देखभाल करनी चाहिये। तथा उन्हें बाहर वृद्धाश्रम (ओल्ड एज रेस्क्यू हाऊसेज) में नहीं ढकेलना चाहिये। यह हिन्दू जीवन पद्धति का एक अति आवश्यक मूल्य है।

(5) **स्त्रीत्व के प्रति आदर** : स्त्रीत्व को अत्यधिक आदर प्रदान करना, हिन्दू जीवन पद्धति के महत्वपूर्ण मूल्यों में से एक है। स्त्री को कामसुख की वस्तु न मानकर, दैवीय-सांस्कृतिक धरोहर के रूप में स्वीकार किया जाता है। स्वयं की पत्नी को छोड़कर वह भी केवल उसकी पत्नी की भूमिका में, प्रत्येक स्त्री के साथ अपनी माता के समान व्यवहार करना, हिन्दू जीवन पद्धति का अभिन्न अंग है। प्रत्येक स्त्री जिसमें बालिकाएँ भी सम्मिलित हैं, मातृत्व के दैवीस्वरूप में स्वीकार की जाती है। इस मूल्य का विकास एवं संरक्षण ही स्त्रियों पर घात करने की पुरुष की मूल प्रवृत्ति के विरुद्ध सर्वाधिक प्रतिरोधी उपाय है।

(6) **करुणा** : मनुष्य सहित सभी जीवित प्राणियों के प्रति प्रेम एवं दया भाव रखना चाहिये क्योंकि उनमें से प्रत्येक में हमारी तरह ही आत्मा है और जिसमें परमात्मा (ईश्वर) से विकसित होने वाला समान प्रकाशपुंज निहित है। यही हिन्दू जीवन पद्धति का एक अन्य आयाम है। हिन्दू जीवन पद्धति सरल जीवन तथा पानी, खनिज, वृक्ष एवं वनस्पतियों जैसे प्राकृतिक संसाधनों के न्यूनतम उपयोग पर बल देती है, क्योंकि इनका लाभ सदैव ही सभी जीवित प्राणियों के लिये होना चाहिये।

(7) **सच्चा जीवन** : अवैधानिक धन का अर्जन न करना, अनैतिक एवं अवैधानिक इच्छाओं की पूर्ति में संलग्न न होना तथा एक सच्चा जीवन बिताना हिन्दू जीवन पद्धति का ही एक अन्य पक्ष है। यह सच्चाई सिद्धांत है केवल नीति मात्र नहीं।

(8) **संयम या इन्द्रिय निग्रह** : एक मनुष्य को ‘आत्म संयम’ के गुण का विकास करना चाहिए क्योंकि यही केवल उसके मन को नियंत्रित कर सकता है। मन ही मनुष्यों के सभी अच्छे या बुरे कार्यों का मूल स्रोत है। व्यक्ति के शारीरिक,

बौद्धिक एवं वित्तीय संसाधनों को इस रूप से नियमित करने हेतु कि इनका उपयोग सदैव अच्छे कार्यों के लिये हो संयम का गुण अति आवश्यक है।

(9) **त्रिकोण शुद्धि** : व्यक्ति के विचार, वाणी तथा कर्म के बीच सामंजस्य होना चाहिये। इसका अभिप्राय है कि व्यक्ति को वही बोलना चाहिये, जो वह अपने मन में सोचना है और तदनु रूप ही कार्य करना चाहिये। यही शरीर, मन एवं आत्मा की सच्चाई है।

(10) **पारिवारिक जीवन** : एक पुरुष एवं स्त्री के मध्य विवाह के माध्यम से निर्मित पति-पत्नी के संबंधों की पवित्रता, जिससे परिवार अस्तित्व में आता है तथा इसके बीच संबंधों का अटूट होना ही हिन्दू जीवन पद्धति में प्रतिपादकों द्वारा प्रदत्त सुदृढ़ आधार है। उस पर ही सामाजिक जीवन संरचित है। अतः पारिवारिक जीवन को सर्वोच्च महत्व दिया गया है। यह कहा जाता है कि 'जो अच्छे पारिवारिक जीवन बिता रहे हैं उन पर दैवी कृपा है।' इसी काल में व्यक्ति को अर्थोपार्जन के एवं परिवारपान, सभी अर्जन न करने वाले पारिवारिक सदस्यों को सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा प्रदान करना, साथ ही समाज की भी किसी व्यवसाय अथवा व्यापार अथवा कार्य द्वारा सेवा करना तथा बच्चे पैदा करना, उन्हें बड़ा करना एवं अच्छे नागरिक के रूप में उन्हें ढालना - जैसे उत्तरदायित्वों का वहन निर्विघ्न करना पड़ता है। परिवार के अन्य उत्तरदायित्व-अतिथि सत्कार, जरूरतमंदों की सहायता तथा सर्वजन हिताय कर्म भी रहे हैं।

(11) **माता की संकल्पना** : माँ (माता) को ईश्वर के समान, सर्वोच्च पद इसलिये दिया जाता रहा है, क्योंकि वह व्यक्ति को जन्म देती है, उसका पालन-पोषण करती है, अपने बच्चों के कल्याण एवं भलाई के लिये, अपनी माता से बढ़कर दूसरा कोई प्यारा नहीं है। सभी स्त्रियों को माता के समकक्ष ही स्थान दिया गया है।

माता के प्रति कृतज्ञता की भावना का विस्तार पृथ्वी तक समाहित है जो कि हमें वह सब कुछ प्रदान करती है जिसकी हमें आवश्यकता है अतः उसकी पूजा 'भू-माता' के रूप में की जाती है। इसी प्रकार की भावना मातृभूमि (मदरलैण्ड) शब्द से प्रस्फुटित होती है। इस कारण हिन्दू जीवन पद्धति में किसी का अपना देश केवल धन या संपत्ति का द्योतक नहीं होता है, वरन् इसे माता के स्थान पर रखा गया है। इसलिये हम भारत को, भारत माता मानते हैं।

केवल एक जयघोष 'भारत माता की जय' या 'वन्दे मातरम्' इस भूमि के सभी जनों को उनकी भाषा, धर्म, जाति, क्षेत्र इत्यादि के विभेद के होते हुये भी इसी कारण प्रेरित करता है और एकता सूत्र में जोड़ता है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर उपाख्य श्रीगुरुजी ने हमारी मातृभूमि के प्रति हमारे स्नेह की व्याख्या करते हुये इस प्रकार कहा है- 'किसी की माता कितनी भी आकर्षणविहीन, अशिक्षित अथवा अन्य रूप में अशक्त हो, वह पृथ्वी पर सर्वाधिक प्यारी है। भारत माता के प्रति यही हमारी मान्यता है।'

प्रत्येक हिन्दू मातृत्व को अत्यन्त महत्व देता है और उसमें स्वमाता (अपनी माता) के प्रति गहन आदर होता है। स्त्री-माता (माता के रूप में स्त्री), भू-माता (पृथ्वी माता) तथा भारत माता (उन लोगों के लिये जिनकी मातृभूमि भारत से पृथक है उनके लिये वह देश) इसी कारण से एक हिन्दू जो भी देश उसकी मातृ-भूमि हो उस देश के प्रति निष्ठावान होता है। यह हिन्दू जीवन पद्धति का एक विशेष गुण अथवा लक्षण है। इससे भी अधिक गाय जो हमें दूध देती है उसे भी माता के स्थान पर स्थापित किया गया है और 'गौमाता' कहा जाता है। हिन्दुओं के द्वारा खाद्य सामग्री के रूप में -गोमांस' के निषेध का यही आधार है।

उपरोक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुये, अर्नाल्ड टायनबी ने इस प्रकार कहा है।-

'एक अध्याय, जिसका प्रारम्भ पाश्चात्य था; उसका भारतीय अन्त होना आवश्यक है, यदि वह मानव प्रजाति के आत्म-विनाश का अन्त नहीं है.....मानव इतिहास के इस सर्वोच्च विनाशकारी क्षण में, मानवता के लिये, भारतीय शैली ही एकमात्र मोक्ष का मार्ग है।'

### संस्कृति तथा राष्ट्रीयता पर सर्वोच्च न्यायालय एवं गाँधीजी

उपरोक्त तथा हिन्दू जीवन पद्धति के अन्य मूल्यों के प्रचलनों से ही, हिन्दू संस्कृति का अभ्युदय हुआ है जिसने इस देश के लोगों को एक राष्ट्र के बंधन में जोड़ रखा है। इस पक्ष को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी प्रदीप जैन प्रकरण में (ए.आई.आर. 1948 एस.सी. 1420) प्रभावशाली ढंग से निम्न शब्दों में रखा गया है - 'यह इतिहास का एक रोचक तथ्य है कि भारत को सहस्राब्दियों में उद्विकसित



एक समान संस्कृति के कारण राष्ट्र के रूप में गढ़ा गया है न कि किसी भाषा अथवा इसके क्षेत्रों के आधार पर अथवा निरंतर एक क्षेत्रीय राजनीतिक शासनाधिकार के कारण यह अस्तित्व में आया है। यह सांस्कृतिक एकता- किसी अन्य बंधन की अपेक्षा अधिक आधारभूत व सतत है जो कि देश के लोगों को जोड़े रख सकती है - जिसने इस देश को, एक राष्ट्र के अटूट बंधन में बाँधा है।'

उपरोक्त हिन्दू संस्कृति ही हिन्दू जीवन पद्धति का एक सारभूत प्रत्यय है। महात्मा गाँधी ने हिन्दू जीवन पद्धति को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्वीकार किया है जिसकी परिणति हमारी संस्कृति में हुई है। उन्होंने इस प्रकार से कहा है - 'मेरे अभिमत में किसी भी संस्कृति का खजाना इतना समृद्ध नहीं है जितना कि हमारा है। हमने इसका मूल्य संज्ञापित नहीं किया है। यदि हम अपनी संस्कृति का अनुपालन नहीं करते हैं तो एक राष्ट्र के रूप में, हम आत्महत्या कर रहे होंगे।' (सावरमती आश्रम की दीवारों पर अंकित)

'जैसे पश्चिम में उन्होंने लुभावनी भौतिक चीजें खोजी हैं, इसी प्रकार से हिन्दुत्व ने इससे और अधिक महत्वपूर्ण चीजें धर्म, अध्यात्म तथा आत्मा में खोजी हैं, लेकिन इन महान एवं सुन्दर चीजों पर हमारी दृष्टि नहीं जाती है। हम पश्चिमी विज्ञान की भौतिक प्रगति की चकाचौंध से प्रभावित हैं, मैं इस प्रगति से मोहित नहीं हूँ।'

वस्तुतः हिन्दुत्व में ऐसा कुछ है जिसने इसे आज तक जीवित रखा है। इसने बेबीलोन, पर्सीयन तथा मिस्र की सभ्यताओं का विनाश देखा है। अपने चारों तरफ देखो, रोम कहाँ है और कहाँ है यूनान? आज तुम कहाँ भी गिब्रन का इटली या प्राचीन रोम नहीं देख सकते, इटली जाने पर क्या तुम्हें प्राचीन रोम दिखाई देगा? ग्रीस (यूनान) जाओ, वहाँ क्या विश्व प्रसिद्ध सबसे बड़ी सभ्यता के दर्शन होते हैं? दूसरी ओर भारत आते हुए, किसी को अत्यन्त प्राचीन आलेखों का अध्ययन करने दो और तुम्हारे चारों तरफ देखने दो। तब उसे यह कहने में कठिनाई नहीं होगी कि हाँ, मैं यहाँ प्राचीन भारत को, आज भी जीवित देख रहा हूँ। यह सच है कि यहाँ-वहाँ गोबर के ढेर लगे हैं, लेकिन उनके नीचे भरपूर खजाना दबा हुआ है और यह क्यों बचा रहा है इसका कारण है कि हिन्दुत्व ने अपने समक्ष जो लक्ष्य निर्धारित किये थे, वे भौतिक नहीं आध्यात्मिक आधारों पर विकसित हुए थे। हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति, हमारा स्वराज्य हमारी आवश्यकताओं के

प्रतिबन्धन व आत्मनिषेध पर आधारित रहे हैं न कि आवश्यकताओं की अभिवृद्धि व आत्मानुग्रह पर (माई पिक्चर आफ फ्री इंडिया, पेज 10)

'हमारी सभ्यता का मूल सत्त्व है कि हम अपने सभी सार्वजनिक और निजी मामलों में, नैतिकता को सर्वोच्च स्थान प्रदान करते हैं'.....'मेरा स्वराज, हमारी सभ्यता के उद्भव को सुरक्षित रखता है। यह अनेक नई बातें लिखना चाहता है लेकिन वे सभी भारतीय स्लेट पर लिखी जानी चाहिए।'

(पूर्वोक्त - 64-65)

उपर्युक्त पक्ष हिन्दुत्व के प्रधान पक्ष हैं।

### सार - संक्षेप

वर्तमान विषय का सार-संक्षेप, निम्नलिखित प्रार्थना के साथ करना उपयुक्त होगा जो कि हिन्दू मत तथा हिन्दू जीवन पद्धति के मूल तत्वों को प्रदर्शित करती है -

सर्वे भवन्तु: सुखिनः

सर्वे सन्तु निरामयाः

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु

मा कश्चिद् दुःखं भागभवेत्।

(सभी सुखी हों, सभी निरोगी हों, सभी को शुभ दर्शन हों और कोई दुःख से ग्रसित न हो।)

लोका समस्ता सुखिनः भवन्तु

(सभी लोग सुखी हों।)





## हिन्दू

- 1 हिन्दुओं ने गत दस हजार वर्ष के अपने इतिहास में राजनीतिक विजय के द्वारा किसी भी देश को अपना उपनिवेश नहीं बनाया।
- 2 हिन्दुओं ने संख्या प्रणाली का अन्वेषण किया। पाँचवीं शताब्दी में आर्यभट्ट ने शून्य (0) का प्रयोग किया। आर्यभट्ट से भी हजारों वर्ष पूर्व वैदिक कालखंड में शून्य का ज्ञान था। हिन्दुओं ने ही विश्व को दशमलव प्रणाली दी।
- 3 दुनिया का पहला विश्वविद्यालय ईसा पूर्व 700 में तक्षशिला में स्थापित हुआ। वहीं विश्वभर से आए दस हजार से अधिक छात्र 60 से अधिक विषयों का अध्ययन करते थे। ईसापूर्व चौथी शताब्दी में नालंदा विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीन भारत की एक अनूठी उपलब्धि था।
- 4 सभी यूरोपीय भाषाओं की जननी संस्कृत है। फोबर्स पत्रिका (जुलाई 1987) के अनुसार कंप्यूटर सॉफ्टवेयर के लिए संस्कृत सर्वाधिक उपयुक्त भाषा है।
- 5 आयुर्वेद ही मनुष्य को ज्ञात सबसे पहली चिकित्सा प्रणाली है। औषधि विज्ञान के जनक चरक ने 2500 वर्ष पूर्व आयुर्वेद का निर्माण किया। हमारी सभ्यता में आज आयुर्वेद अपना उचित स्थान तेजी से पुनः प्राप्त कर रहा है।
- 6 यद्यपि आधुनिक भारत की छवि एक गरीब एवं अविकसित देश के रूप में प्रस्तुत की जाती है, परन्तु सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजों के आक्रमण के पूर्व भारत इस धरती का सर्वाधिक समृद्ध देश था।
- 7 नौ-परिवहन का सूत्रपात छः हजार वर्ष पूर्व सिंधु नदी में हुआ। अंग्रेजी शब्द (NAVIGATION-नेविगेशन) नौ-परिवहन की उत्पत्ति संस्कृत शब्द 'नवगति'

हिन्दू

43

- से हुई। इसी प्रकार अंग्रेजी शब्द NAVY - नेवी (नौ-सेना) भी संस्कृत के 'नौ' से ही विकसित हुआ।
- 8 भास्कराचार्य ने खगोलशास्त्री स्मार्त से सैकड़ों वर्ष पूर्व पृथ्वी द्वारा सूर्य प्रदक्षिणा की अवधि नापी थी। पाँचवीं शताब्दी में यह अवधि 365.258756484 दिन निर्धारित की गई।
- 9 'पाय' का मूल्य सबसे पहले बोधायन ने आँका। उसी ने उसका सिद्धांत परिभाषित किया जो 'पायथागोरियन सिद्धांत' के नाम से जाना जाता है। बोधायन ने यह कार्य यूरोपीय गणितज्ञों से बहुत पहले ईसा पूर्व छठी शताब्दी में किया था।
- 10 बीजगणित, त्रिकोणमिति एवं कैलकुलस भारत की ही विश्व को देन है। श्रीधराचार्य ने ग्यारहवीं शताब्दी में वर्ग समीकरण (Quadratic equation) की व्याख्या की। ग्रीकों और रोमनों द्वारा उपयोग में लाया जाने वाला अधिकतम अंक 106 था, जबकि, ईसापूर्व 5000 वर्ष पहले वैदिक काल में हिन्दु 10<sup>53</sup> जैसे बड़े तक विशिष्ट नामों के साथ प्रयोग में लाते थे। आज भी विशिष्ट नाम से उपयोग किया जाने वाला अधिकतम अंक 'टेरा' (10<sup>12</sup>) है।
- 11 जेमोलॉजिकल इंस्टिट्यूट ऑफ अमेरिका के अनुसार वर्ष 1896 तक विश्व में भारत ही रत्नों का एकमात्र स्रोत था।
- 12 अमेरिका स्थित आई-ई-ई. ने साबित किया कि प्रो. जगदीशचन्द्र बसु ही बेतार संचार प्रणाली के अन्वेषक थे, न कि मार्कोनी, जिसके बारे में विश्व का वैज्ञानिक समाज सौ साल भ्रम में रहा।
- 13 सिंचाई के लिए जलाशय एवं बाँध का निर्माण सबसे पहले भारत में सौराष्ट्र में हुआ।
- 14 ईसा पूर्व 150 वर्ष के शक राजा-रुद्रदमन प्रथम के अनुसार, रैवतक पहाड़ी पर मनोरम झील - 'सुदर्शन' का निर्माण चन्द्रगुप्त मौर्य के कार्यकाल में हुआ।
- 15 शतरंज (चतुरंग या अष्टपद) का मूल स्थान भारत ही है।
- 16 शल्य चिकित्सा के प्रणेता थे-सुश्रुत। 2600 वर्ष पूर्व सुश्रुत तथा समकालीन चिकित्सा शास्त्रियों ने अति जटिल शल्यक्रियाएँ कीं, जैसे - सिजेरियन, मोतियाबिंद अवयव प्रत्यारोपण, पथरी आदि। यहाँ तक कि प्लास्टिक एवं

शल्य क्रिया में सवा सौ से अधिक उपकरण प्रयुक्त होते थे। अनेक प्राचीन ग्रंथों में शरीरशास्त्र, जन्तु-वनस्पति विज्ञान (Etology) भ्रूणविज्ञान, पाचन क्रिया, चयापचय (Metabolism) आनुवांशिकता विज्ञान (Genetic) और रोग से प्रतिरक्षा का गहरा ज्ञान पाया जाता है।

- 17 पाँच हजार वर्ष पूर्व जब विश्व की अनेक सभ्यताएँ जंगल निवासी घुमंतु लोगों तक ही सीमित थीं, हिन्दुओं ने सिंधु घाटी में हड़प्पा सभ्यता का विकास किया।
- 18 स्थान मूल्य प्रणाली, दशमलव प्रणाली का विकास भारत में ही ईसा की पहली शताब्दी में हुआ।



## 3

## हिन्दुस्थान

इन्होंने कहा था-

### 1 अल्बर्ट आइंस्टीन :

हम भारत के बहुत ऋणी हैं, जिसने हमें गिनती सिखाई, जिसके बिना कोई भी सार्थक वैज्ञानिक खोज संभव नहीं हो पाती।

### 2 मार्क ट्वेन :

भारत उपासना पथों की भूमि, मानव जाति का पालना, भाषा की जन्मभूमि, इतिहास की माता, पुराणों की दादी एवं परम्परा की परदादी है। मनुष्य के इतिहास में जो भी मूल्यवान एवं सृजनशील सामग्री है, उसका भंडार अकेले भारत में है। यह ऐसी भूमि है जिसके दर्शन के लिए सब लालायित रहते हैं और एक बार उसकी हल्की सी झलक मिल जाए तो दुनिया के अन्य सारे दृश्यों के बदले में भी वे उसे छोड़ने के लिए तैयार नहीं होंगे।

### 3 फ्रांसीसी विद्वान रोमां रोलां :

मानव ने आदिकाल से जो सपने देखने शुरू किये उनके साकार होने का इस धरती पर कोई स्थान है तो वह है भारत।

### 4 अमेरिका में चीन के राजदूत हू शिह :

सीमा पार एक भी सैनिक न भेजते हुए भारत ने बीस सदियों तक सांस्कृतिक धरातल पर चीन को जीता और उसे प्रभावित किया।

### 5 मैक्समूलर :

यदि मुझसे कोई पूछे कि किस आकाश के तले मानव मन अपने अनमोल उपहारों समेत पूर्णतया विकसित हुआ है, जहाँ जीवन की जटिल समस्याओं

का गहन विश्लेषण हुआ और समाधान भी प्रस्तुत किया गया, जो उसके भी प्रशंसा का पात्र हुआ जिन्होंने प्लैटो एवं कांट का अध्ययन किया, तो मैं भारत का नाम लूँगा। यदि कोई मुझसे पूछे कि वह कौन सा साहित्य है जिससे हम यूरोपीय लोग (जो आज तक केवल ग्रीक, रोमन और यहूदी विचारों पर पाले-पोसे गए हैं) उन उत्तुंग विचारों को प्राप्त कर सकते हैं जो हमारे आंतरिक जीवन को अधिक परिपूर्ण, अधिक वैश्विक और सही अर्थों में मानवीय बनाने के लिए नितांत आवश्यक हैं, जो केवल इस जीवन के लिए ही नहीं अपितु देहान्तर और शाश्वत जीवन के लिए भी आवश्यक है, तो मैं पुनः भारत की ओर ही इंगित करूँगा।

#### 6 अल्बर्ट आइंस्टीन :

हमारे आक्रमण, उदण्डता एवं लूटपाट के बदले भारत हमें सिखाएगा सहिष्णुता और परिपक्व मन की मृदुता और अजेय आत्मा का निश्छल संतोष, सामंजस्य, भावना की शीतलता तथा सभी प्राणी मात्र से एकरूपतायुक्त शांतिप्रद स्नेह।

#### 7 आरनॉल्ड जोसेफ टायनबी :

मानव जाति के इतिहास के इस अति भयानक काल में सम्राट अशोक, रामकृष्ण परमहंस और महात्मा गाँधी द्वारा बताया हुआ प्राचीन भारत का मार्ग ही उद्धार का एकमात्र मार्ग है। इसमें वह दृष्टिकोण और भावना है जिससे मानव जाति को एक परिवार के रूप में विकास करना संभव होगा और इस परमाणु युग में यही एकमात्र मार्ग है जो हमें नष्ट होने से बचा सकता है।



## 4

### हिन्दुत्व

यह भी इन्होंने कहा -

#### 1 उपनिषदों पर आर्थर शोपेनहावर :

विश्वभर में ऐसा कोई अध्ययन नहीं है जो उपनिषदों जितना हितकारी और उदात्त हो। यही मेरे जीवन को शांति देता रहा है और वही मृत्यु में भी शांति देगा।

#### 2 हेनरी डेविड थोरो :

वेदों का जो सार मैंने पढ़ा है वह मेरे लिये अत्युच्च और अतिशुद्ध ज्योतिर्मय पिंड के प्रकाश जैसा है, जो उन्नत मार्ग को बिना किसी जटिलता के सरल और सार्वभौम तरीके से समझाता है। वह मेरे लिये तारों भरी रात्रि में सुदूर आकाश से आने वाले चन्द्रमा के प्रकाश जैसा है।

#### गीता के बारे में उन्होंने कहा :

प्रातःकाल मैं अपनी बुद्धिमत्ता को अपूर्व और ब्रह्मांडव्यापी गीता के तत्वज्ञान से स्नान कराता हूँ, जिसकी तुलना में हमारा आधुनिक विश्व और उसका साहित्य अत्यन्त क्षुद्र एवं तुच्छ जान पड़ता है।

#### 3 गवर्नर वॉरिन हेस्टिंग्स :

भारत में गीता जैसे तत्वज्ञान के संदेश तब भी जीवित रहेंगे, जब अँग्रेजों के साम्राज्य का अस्तित्व भारत में से बहुत पहले ही नष्ट हो चुका होगा तथा संपत्ति व सामर्थ्य द्वारा उन्होंने प्राप्त किये हुए स्रोत काल स्मृति में नष्ट हो चुके होंगे।

#### 4 हिन्दू धर्म ग्रंथों पर राल्फ वाल्डो इमर्सन :

मौलिक एकात्मता की अवधारणा पर चिंतन सभी देशों में होता है। प्रार्थना से प्राप्त तन्मायता और भक्ति से प्राप्त परमानंद सब से तादात्म्य की



अनुभूति देता है। वेद, गीता, विष्णु पुराण जैसे हिन्दू धर्म ग्रंथों में इसी भाव की सर्वोच्च अभिव्यक्ति प्रकट होती है।

“गीता” पर उन्होंने कहा : मैं भगवद्गीता का अत्यन्त ऋणी हूँ। यह पहला ग्रंथ है जिसे पढ़कर मुझे लगा कि किसी विराट शक्ति से हमारा संवाद हो रहा है। इसमें क्षुद्रता और अनुपयुक्तता से परे, उच्चतम प्रज्ञा की स्पष्ट, शीतल, तर्कशुद्ध ध्वनि है जिसकी हुंकार बीते युग एवं माहौल की होते हुए भी वर्तमान समस्याओं का निदान एवं उपाय बताने में पूरी तरह सक्षम है।

#### 5 भारत एवं हिन्दुत्व पर एनी बेसेंट :

विश्व के विभिन्न धर्मों का लगभग चालीस वर्ष अध्ययन करने के पश्चात् मैं इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि हिन्दुत्व जैसा परिपूर्ण, वैज्ञानिक, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक धर्म और कोई नहीं। इसमें कोई भूल न करे कि बिना हिन्दुत्व के भारत का कोई भविष्य नहीं। हिन्दुत्व ऐसी भूमि है जिसमें भारत की जड़ें गहराई तक पहुँची हैं, उन्हें यदि उखाड़ा गया तो यह महावृक्ष निश्चय ही अपनी भूमि से उखड़ जाएगा। हिन्दू ही यदि हिन्दुत्व की रक्षा नहीं करेंगे तो और कौन करेगा? अगर भारत के सपूत हिन्दुत्व में विश्वास नहीं करेंगे, तो कौन उनकी रक्षा करेगा? भारत ही भारत की रक्षा करेगा। भारत और हिन्दुत्व एक ही है।

#### 6 गीता पर आलडिस हक्सले :

स्थायी दर्शन का सुस्पष्ट एवं सर्वस्य सार है गीता। अतः इसका चिरंतन मूल्य न केवल भारतीयों के लिए अपितु समूची मानव जाति के लिए है।

#### 7 विल्हेम वॉन हम्बोल्ट :

गीता एक अत्यंत सुन्दर और संभवतः एकमात्र सच्चा दार्शनिक गीत है जो किसी अन्य भाषा में नहीं। वह एक ऐसी गहन एवं उन्नत वस्तु है जिस पर सारी दुनिया गर्व कर सकती है।

#### 8 प्रो. ब्रायन डेविड जोसेफसन (फ्रांस)

(सबसे कम आयु के नोबल पुरस्कार विजेता)

वेदांत और सांख्य में मन और विचार प्रणाली जो क्वांटम फील्ड (अर्थात् परमाणु और आण्विक स्तर पर कणों की क्रिया और वितरण) के लिये कुंजी है।

#### 9 नाना पालखीवाल :

हमारे प्राचीन मनीषियों ने ब्रह्म अर्थात् अंतिम सत्य के बारे में जो कहा है वह वैसा ही है जैसा हमारे आज के महान वैज्ञानिक भौतिक पदार्थ के पहेलीनुमा गुणधर्म के बारे में सोचते हैं। विज्ञान जितना आगे बढ़ता है उतना वह वेदान्त के समीप जाता है। ऐसी है हमारी महान विरासत, और फिर भी हम क्षणिक तुच्छ विषयों में उलझे रहने के कारण उसकी ओर यदा-कदा ही जाते हैं।

#### 10 चहूदी मेन्यूहिन (विश्व विख्यात वाचलिन वादक) :

एक औसत पश्चिमी व्यक्ति से एक हिन्दू सौ गुना अधिक परिष्कृत, अधिक सुसंस्कृत, अधिक प्रामाणिक, अधिक धार्मिक और अधिक संतुलित है।

#### 11 स्वामी विवेकानन्द :

हिन्दुत्व में भारत की जीवन शक्ति विद्यमान है और जब तक हिन्दू जाति अपने पूर्वजों की विरासत को नहीं भूलती तब तक धरती की कोई भी शक्ति उन्हें नष्ट नहीं कर सकती।

#### 12 महात्मा गाँधी :

हिन्दुत्व सत्य की चिरंतन खोज का नाम है और आज यदि वह मृतप्राय, अप्रगतिशील दिखता है तो मात्र इसलिये कि हम थके हुए हैं। जैसे ही वह थकावट दूर होगी, विश्व के समक्ष अकल्पनीय तेजस्विता से हिन्दुत्व का विस्फोट होगा।





## हिन्दू विचार की श्रेष्ठता

क्या आप जानते थे ?

- 1 अमेरिका को किसने खोजा? क्रिस्टोफर कोलम्बस ने? जी नहीं!  
अजतीस के देवालयों में प्राप्त भारतीय कला के नमूने साबित करते हैं कि अमेरिका में हिन्दू पहले ही पहुँचे हुए थे।
- 2 क्या भारत को वॉस्को-डि-गामा ने खोज निकाला? बिल्कुल नहीं!  
वॉस्को-डि-गामा के जहाज का अफ्रीका से दक्षिण भारत तक एक भारतीय नाविक ने मार्गदर्शन किया। भारतीय जहाज वॉस्को-डि-गामा के जहाज से कई गुना बड़ा था।
- 3 तथ्याकथित पायथागोरस सिद्धांत किसने सूत्रबद्ध किया?  
पायथागोरस ने? जी नहीं! इस सिद्धांत का उल्लेख पायथागोरस के पैदा होने से बहुत पहले भारत के शिल्पसूत्र में है।
- 4 गुरुत्वाकर्षण शक्ति की खोज किसने की? न्यूटन ने? नहीं!  
विख्यात भारतीय खगोलशास्त्री आर्यभट्ट एवं भास्कराचार्य इस शक्ति से परिचित थे, जो न्यूटन से क्रमशः एक हजार एवं पाँच सौ वर्ष पहले के हैं।
- 5 विद्युत शक्ति की खोज कब हुई? लगभग सौ वर्ष पहले? नहीं!  
वेदों में विद्युत शक्ति, चुंबकत्व, ताप, प्रकाश, ध्वनि एवं ईश्वर की सुस्पष्ट परिभाषाएँ दी हुई हैं। यहाँ तक कि परमाणु मिश्रण का सिद्धांत भी वेदकाल में ज्ञात था।
- 6 गणितज्ञ चन्द्रशेखर ने सितारे के सबसे बड़े आकार की गणना की। अब वैज्ञानिक उसी को चन्द्रशेखर सीमा कहते हैं।

- 7 रामानुजम एक श्रेष्ठ गणितज्ञ थे जिन्होंने कैंब्रिज विश्वविद्यालय के प्रो. हार्डी के साथ संभावना सिद्धांत (Probability Theory) की खोज की। रामानुजम की मौलिक प्रतिभा को स्वयं हार्डी ने सौ में सौ अंक दिये जबकि स्वयं को केवल पच्चीस। इस प्रकार हार्डी के मन में रामानुजम के प्रति इतना आदर था।
- 8 शून्य की संकल्पना एवं दशमलव प्रणाली भारत के हिन्दू मनीषियों की ही खोज है।
- 9 प्राचीन हिन्दू गणित के सहारे (जो वैदिक गणित इस नाम से जाना जाता है।) कठिन से कठिन गणितीय प्रश्नों का एक या दो पक्तियों में मौखिक उत्तर संभव है। विश्व हिन्दू परिषद् ऑस्ट्रेलिया में समय-समय पर वैदिक गणित की निःशुल्क कार्यशाला आयोजित करती है।
- 10 संगणक (Computer) में सभी तरह की गणना के लिए प्रयुक्त द्व्यंक संख्या की संकल्पना हिन्दू पुराणों में हजारों वर्ष पूर्व अस्तित्व में थी। द्व्यंक प्रणाली में संख्या या तो 1 (अस्ति) अथवा 0 (नास्ति) होती है। सभी संख्याएँ 1 और 0 का मिश्रण हैं। हमारे उपनिषद् कहते हैं - "समूची सृष्टि 1 अर्थात् अस्ति और 0 अर्थात् नास्ति का मिश्रण है। "उपर्युक्त कथन और तथ्य तो मात्र एक झलक है - पूर्ण सूची बनाने का प्रयत्न करें तो वह अंतहीन होगी।  
किन्तु आज के भारत में यदि हम उस महान भारत की झलक भी नहीं देखते हैं तो उसका अर्थ है कि हमें अपनी क्षमता का कोई अंता-पता नहीं और यदि है, तो हम पुनः एक बार एक तेजस्वी एवं प्रेरणादायी देश के रूप में उभर सकते हैं जिसके द्वारा प्रकाशित मार्ग पर शेष विश्व अनुयायी बनेगा।

आइए, हम अपने आत्म विश्वास को जगाएँ। जो हमारे पूर्वज कर सके उसे हम उनकी सुयोग्य संतानें क्यों नहीं कर सकतीं ?



हिन्दू संस्कृति  
और  
पर्यावरण

## हिन्दू संस्कृति और पर्यावरण

आज जब हम अपने चारों ओर देखते हैं तो लगता है कि भारत ने सभी क्षेत्रों में अच्छी प्रगति की है। उसकी जरूरतें काफी हद तक पूर्ण हो रही हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि इतनी तरक्की के बावजूद मानव सुखी और संतुष्ट नहीं है, कहीं न कहीं उसके मन में असन्तोष है। वह सभी स्तरों पर अनेकानेक समस्याओं का सामना कर रहा है। इनमें से एक समस्या जो सबसे गंभीर रूप में हमारे सामने मुँह बाए खड़ी है वह है, 'पर्यावरण प्रदूषण'। यह एक विश्वव्यापी समस्या है। 'प्रकृति का चक्र' टूटने से यह समस्या पैदा हुई है। क्यों टूटा प्रकृति का चक्र? अधिक सुखी होने की लालसा में हमने उपभोग बढ़ाया, उपभोग की पूर्ति के लिए अधिक उत्पादन किया और अधिक उत्पादन हुआ प्रकृति संतुलन की कीमत पर। ध्यान देने की बात यह है कि प्रकृति संतुलन को दरकिनार कर जो उत्पादन की बहुलता की गई वह मानव की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नहीं, बल्कि भोग लालसा की पूर्ति के लिए की गई और इस अधिक उत्पादन से प्रकृति का विनाश हुआ। प्रकृति का यही विनाश हमारे दुःख का कारण बन गया।

### ऐसा क्यों?

क्या बिडम्बना है कि सुख प्राप्त करने के लिए हमने दुःखों को जन्म दिया। अतः कहीं न कहीं विसंगति अवश्य है। चाहे यह हमारे सोच में हो या मौजूदा व्यवस्था में हो। प्रत्येक व्यवस्था एक निश्चित चिंतन का परिणाम होती है। इससे तय है कि यह विसंगति भी हमारी सोच का नतीजा है। हमें देखना चाहिए कि इसका उद्गम कहीं है? हमारा आज का चिन्तन पुराने पश्चिमी चिन्तन से

प्रभावित है। आज की व्यवस्था और उसका चरित्र, वर्तमान सोच और विकास का मॉडल सभी पाश्चात्य हैं।

### पश्चिम का मशीनी विश्व दृष्टिकोण -

जब कोई चिन्तन दो-छाई शताब्दी तक प्रभावी बना रहता है तो उससे आम जन की सोच प्रभावित होना स्वभाविक है। इससे जन-रुझान और रहन-सहन पर असर पड़ता है। जिन्दगी एक विशेष सौँचे में ढल जाती है। संस्कृति और सभ्यता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। मशीनी विश्व के दृष्टिकोण ने जीवन को वस्तुवादी बनाया। इसके अनुसार जब यह बात प्रमाणित है कि मृतक के भौतिक अवशेष के कणों में समानता नहीं है तो यह बात भी सही है कि जो कुछ हम प्रकृति में चारों ओर देखते हैं उसमें भी समानता नहीं है। समानता के अभाव में जीवन की भौतिकता एक ऐसी दौड़ बन गया है जिसमें हर संसाधन का शोषण कर बलशाली द्वारा जीतने की स्पर्धा आरंभ हो गई है। जब सभी इस प्रकार अंधाधुंध शोषण करने वाले बन गए हैं तो इस शोषण की स्पर्धा में दोष किसे दिया जा सकता है? इसका दुष्परिणाम चाहे मनुष्य को भुगतना पड़े अथवा प्रकृति को अथवा धरती माता को। दुनिया के इस मशीनी नजरिये और जीवन पद्धति के प्रभाव के कारण जिन्दगी का भौतिकीकरण, व्यक्ति में बदलाव, समाज और पर्यावरण का क्षरण शुरू हो गया। व्यक्तिगत आधार पर भौतिकवाद ने उपभोगवाद को चरम पर पहुँचा दिया। इससे व्यक्ति और समाज के स्तर पर समस्याएँ बढ़ गईं। उपभोगवाद के साथ ही पर्यावरण संकट और जटिल हो गया।

### पर्यावरण संकट -

जब उपभोगवाद संतुष्टि का लक्ष्य बन गया तो लाखों उत्पादों की सृष्टि को जाने लगी। इसके लिये प्राकृतिक संसाधनों के शोषण का सिलसिला तेज हो गया। आज हम इस स्थिति में पहुँचे हैं कि जिन प्राकृतिक संसाधनों का पुनर्जनन संभव है अथवा नहीं है वे सब सांसत में हैं। उत्पादन के दौर में प्रदूषण का फैलाव हो रहा है। संसाधनों का जर्जर होना और प्रदूषण पर्यावरण संकट के दो खास पहलू हैं। परन्तु सूची लंबी है। धरती में ऊष्णता बढ़ रही है। वातावरण गर्म हो रहा है। ग्रीन हाउस का मारक प्रभाव असर दिखाने लगा है। ओजोन की परत में छिद्र बढ़ रहा है। भूमि का क्षरण हो रहा है। वन विनाश भी एक संकट के रूप में असर डाल रहा है। इससे पर्यावरण की गुणवत्ता घट-रही है। मानव समाज का जीवन

दूभर बन रहा है। अस्वास्थ्यकारी परिस्थितियों के कारण मानव जीवन ही नहीं अपितु पेड़, पौधों, पशुओं, जानवरों, जीवधारियों का जीवन कठिन हो गया है। जैव प्रकृति संकटापन्न स्थिति में है। यह पर्यावरण के दूषित होने के कारण है।

इस तरह प्रकृति का शोषण तथा पर्यावरण का विनाश कर हम इस अजीब स्थिति में जा पहुँचे हैं। विकास की प्रत्याशा में अपने संसाधनों का आपराधिक उपयोग कर हम विकास को गतिरोध में बदल रहे हैं।

### पागल दौड़ -

इस पागल दौड़ अर्थात् कम से कम समय में अधिकतम विकास करने के लिये हमने प्रकृति को मर्यादा खंडित कर दी है। विकास का परिणाम असहनीय बनता जा रहा है। प्रदूषण और अन्य समस्याओं ने पर्यावरण को असंतुलित करने के दरवाजे खोल दिये हैं। जहर चुलता जा रहा है। प्रकृति का एक चक्र होता है। इस पर विकृतियाँ थोपी जा रही हैं। इससे भौतिक विकास भी अवरुद्ध हो रहा है। इसका परिणाम? अलबर्ट स्विक्वेटर ने कहा है कि 'मनुष्य ने दूरदृष्टि खो दी है। चिन्तन शून्यता और सोच गँवा दिया है। मनुष्य दुनिया का संहार कर स्वयं विनाश को प्राप्त होगा।' हम अलबर्ट को सही साबित कर रहे हैं। यही पाश्चात्य चिन्तन का सीधा परिणाम है।

### समाधान पूर्व दिशा से -

इस पृष्ठभूमि में जब हम भारतीय सभ्यता के बारे में सोचते हैं तो यह जानकर आश्चर्य होता है कि यह सैकड़ों वर्षों से ही नहीं फलती-फूलती रही, अपितु इसकी गाथा हजारों सालों की है। चीनी और जापानी जैसी अन्य पूर्वी सभ्यताएँ भी इसी तरह की हैं। ऐसे में सहज ही यह प्रश्न उठता है कि इन दीर्घजीवी सभ्यताओं की निरन्तरता का रहस्य क्या है? यदि पाश्चात्य जीवनदर्शन प्रकृति से तादात्म्य नहीं रखता और जीवन पद्धति को आघात पहुँचाने के लिये दोषी है तो क्या पूर्वी दर्शन विकास के मॉडल का आधार बन सकता है? इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है। देखें यह कैसे संभव है?

पूर्वी दर्शन ने आरम्भ से ही जो दृष्टि अपनाई वह पश्चिमी सोच से भिन्न है। पूर्वी दर्शन में विश्व जीवमान और समग्र है। यह विचार हिन्दू, बौद्ध, तागैस्ट, शिन्टो अथवा जैन- सभी से मेल खाता है। ये सभी अद्वैत के चरम सत्य को मानते



हैं। वे मानते हैं कि विश्व में सब कुछ क्षण भंगुर है। मानव शरीर तपस्या का माध्यम है। मायाजाल से मुक्ति जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। स्थान परिस्थिति और समय के अनुसार थोड़ा-बहुत अंतर हो सकता है, परन्तु सभी पूर्वी दर्शनों का मूलभूत सिद्धान्त साधारणतः यही है।

### सही ज्ञान -

सत्य के साक्षात्कार के कारण भारतीय दार्शनिकों को प्रत्येक वस्तु का समग्र ज्ञान रहा है। उन्होंने यह कभी नहीं कहा कि विश्व की बुनियाद भौतिक वस्तु है। उन्होंने हमेशा यही कहा कि भौतिक विश्व माया है। विश्व का आधार वस्तु नहीं ब्रह्म है। अपने लगातार रूपान्तरण में ब्रह्म ही विश्व का रूप धारण करता है। ये सभी रूप अस्थायी और मायारूप हैं। हमारी इन्द्रियों की सीमाओं के कारण हम विविध रूप देखते हैं। विश्व नाना रूपों में दिखाई देता है और यही ब्रह्म की विशेषता है, जैसे किसी रस्सी को देखकर साँप का भ्रम होता है। वस्तुतः प्रत्येक चीज ब्रह्म है। परम सत्य के प्रति हम आत्मगत धारणा बना कर चलते हैं, इसे ही माया का प्रभाव माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि हम उसके प्रभाव में हैं।

ऋषिगण चाहते हैं कि इस माया के पाश से मुक्त होकर हम सत्य का साक्षात्कार करें। इसे ही वे जीवन का लक्ष्य मानते हैं। वे भौतिक सुखों से दूर रहते हैं। क्योंकि इस सबकी अनुभूति अस्थायी है। यह दर्शन सुखानुभूति के विरुद्ध नहीं है। किन्तु इसमें ऐसी मान्यता है कि जो सुखानुभूति ऐन्द्रिक है, वह क्षणभंगुर है। इसलिये यह दर्शन चिरस्थायी सुखानुभूति की खोज करता है। ऐसी सुखानुभूति अतीन्द्रिय है, जिसमें शरीर और इन्द्रियाँ एकाकार हो जाते हैं।

### यह कैसे प्राप्त हो -

व्यवहार में इसे कैसे प्राप्त किया जाए? दार्शनिक परम्परा ने इसके लिए सुन्दर विधियों का विकास किया है। कहा जाता है कि जब भौतिक वस्तुओं से आनन्द प्राप्त किया जाता है तब मस्तिष्क अस्थिर रहता है। वह वस्तु प्राप्ति के लिए इन्द्रियों को उकसाता रहता है। वस्तुगत अनुभव से मस्तिष्क क्षणिक ही शान्त होता है। परन्तु जल्दी ही उकताहट का अनुभव कर वह कुछ और चाहता है। इसकी न सीमा है और न अन्त। हमारे पास उपभोग की सब प्रकार की सामग्री है। परन्तु संतोष नहीं है, अपने इसी भौतिक आनन्द के लिए हमने धरा की लूट-खसोट

कर उसे क्षतिग्रस्त कर दिया है, परन्तु हम हमेशा की तरह ही असंतुष्ट हैं।

इसका समाधान और अधिक उत्पादन बढ़ाना नहीं, अपितु उपभोग की लालसा पर लगाम लगाना है। इसके लिये मस्तिष्क को नियंत्रित करना होगा। ऐसा न करने पर लालसाएँ बढ़ती जाएँगी। इससे व्यक्ति और समाज का क्षरण होगा। पर्यावरण पर प्रतिकूल दबाव बढ़ेगा। मस्तिष्क पर नियंत्रण से लालसाएँ घटेंगी। आन्तरिक विकास होगा। परोक्ष में पर्यावरण विकास और सन्तुलन बढ़ेगा। लालसाएँ कम होने से उपभोग नियंत्रित होगा। उपभोग की गति से संसाधनों के पुनर्जनन की गति तेज होगी। संसाधनों का संरक्षण होने से प्रकृति का चक्र बिना रोक-टोक के घूमेगा। जैव विविधता बनी रहेगी और प्रदूषण नहीं होगा। भौतिकवाद की लालसाओं पर लगाम लगाना एक कड़वी दवा है जिसे निगलना कठिन होगा। शुरुआत में यह प्रक्रिया थोपी हुई लगेगी। परन्तु व्यक्ति, समाज और पर्यावरण के व्यापक हित में यह आवश्यक है। यदि व्यक्तिगत तौर पर की जाने वाली फिजूलखर्ची सामाजिक और पर्यावरण समस्या का रूप लेती है तो इसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। अमेरिका जैसे विकसित देश भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं। जहाँ उपभोग पर रोक लगी है, वहीं कम उपभोग के लिये प्रोत्साहनों की शुरुआत की जा रही है। दंडिक प्रक्रिया और प्रोत्साहन के माध्यम से उपभोग पर रोक लगाई जा रही है।

### हमारे पूर्वजों का सामान्य ज्ञान-

हमारे पूर्वजों ने यह बात किसी त्रासद स्थिति में पहुँचने के बाद नहीं सीखी थी, अपितु यह उन्होंने सामान्य समझ से सीखी। इसलिये आज भी हिन्दू साहित्य व लोकगीतों में यही बात प्रतिध्वनित होती है कि उपभोग पर लगाम लगाओ और अपनी आवश्यकताओं को मर्यादित करो। यह बात हमने संस्कार से सीखी, किसी दंड या प्रोत्साहन के कारण नहीं। हमारी बुद्धि ने ही तब किया कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। श्रेयस और प्रेयस के बीच का भेद अंगीकार किया। मस्तिष्क ने श्रेयस को चुना, अच्छाई से सरोकार जोड़ा। यह पूर्वी दर्शन का महत्वपूर्ण अंग है। मनोदशा के परिष्कार करने की निरन्तर कोशिश हुई है जिसने व्यवहार का रूप धारण किया। मस्तिष्क को इस तरह तैयार करने की प्रक्रिया को 'साधना' और इस विज्ञान को 'योग' इन नामों से जाना जाता है।

### भोग नहीं त्याग-

जहाँ पाश्चात्य दर्शन ने जीवन में भौतिकवादी प्रवृत्ति का अनुसरण किया, वहीं हिन्दू दर्शन ने बौद्धिकवाद को जीवन की शैली बनाया। यह दर्शन ऐसे बाह्य विकास को महत्व देता है जहाँ आनन्द लालसाओं में नहीं है। इसलिए उपभोग पर नियंत्रण हमारी दार्शनिक सोच की उपज और निहितार्थ है। जहाँ व्यक्ति जीवन का परिष्कार करता है वहीं उपभोग पर लगाम लगाता है। यहीं से पर्यावरण के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवस्था का विकास होता है। रंगों वाली शब्दावली में कहा जाए तो 'भगवा चिन्तन' (त्यागमय चिन्तन) का परिणाम होता है 'हरित जीवन' (पर्यावरण मैत्रीपूर्ण जीवन)। प्रकृति का शृंगार भोग से नहीं त्याग से संस्कारित होता है। भोग की प्रवृत्ति से शोषण होता है। भोग से जहाँ परिग्रह का विस्तार होता है, वहीं त्याग से अपरिग्रह की सृष्टि होती है। भोग से हिंसा और त्याग से शान्ति बढ़ती है। परिग्रह से विषमता जन्म लेती है, वहीं अपरिग्रह से विषमता की खाई पटती है। भोग से प्रकृति का प्रदूषण बढ़ता है, तो त्याग से प्रकृति का संरक्षण होता है।

### उपनिषदों का मार्ग -

इस तरह हिन्दू दर्शन विश्व की उत्पत्ति और विकास का खाका है। भौतिक धरातल पर वह प्रकृति के साहचर्य में जीवन जीने का पथ प्रदर्शन करता है। इससे जीवन और प्रकृति की निरन्तरता सुनिश्चित होती है। बुद्धि वैभव के स्तर पर यह मानव को उस अदृश्य सत्ता से साक्षात्कार कराता है। इस तरह हिन्दुत्व भौतिक स्तर पर स्थायी उन्नति की योजना है और आध्यात्मिक स्तर पर मानव के क्रमिक विकास की योजना। जब हम इस बौद्धिक वैभव से परिचित होते हैं या हिन्दुत्व की गहराइयों के निकट पहुँचते हैं तब हम हिन्दुत्व पर गर्व करते हैं।

हिन्दू ही नहीं मानव मात्र जब इस योजना को आत्मसात करता है, तब वह अपने को प्रकृति के साहचर्य में पाता है। प्रकृति से उसके रागात्मक संबंध बनते हैं। प्रकृति केवल भोग्या नहीं रह जाती परन्तु जननी के रूप में हमारे साथ होती है। स्नेह और पोषण का प्रतीक बनती है। हम जैव परम्परा के बराबर के भागीदार बन जाते हैं। प्रकृति से तादात्म्य और सखा भाव विकसित होता है। यह विश्व एकता का विकास हर व्यक्ति की संसाधनों में भागीदारी सुनिश्चित करता है। ईशावास्य उपनिषद् की

प्रथम पंक्ति सात्विक चिन्तन और हरीतिमा के जीवन को सार्थक करती है कि धरा पर प्रत्येक वस्तु ब्रह्ममय है, इसलिये मिल-जुल कर उपभोग करो। दूसरों के अधिकार मत छीनो।

### गीता ज्ञान के प्रकाश में -

गीता में परस्पर पोषण और समभागोदारी का सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ है। इसे यज्ञ माना गया है। यज्ञ का प्रयोजन प्रकृति के चक्र को बनाए रखना है। इसके लिये हितकर और उपयोगी वस्तुओं का आदान-प्रदान अनिवार्य है। जो इस सिद्धान्त का उल्लंघन करता है वह चोर है। गीता के श्लोक 3/12 में इसका उल्लेख है। इसका सार है कि जब किसी व्यक्ति को कोई वस्तु दी जाती है और वह इसे लौटाने की जिम्मेदारी पूरा नहीं करता तो वह चोर है। प्रकृति साफ हवा व शुद्ध पानी देती है। पेड़ वनस्पति भोजन देते हैं। हमारा कर्तव्य है कि हवा को साफ रखें, पानी प्रदूषित न होने दें, आहार को विषाक्त होने से बचाएँ। यदि वायु, जल, धरती को प्रदूषित करते हैं तो समूचा चक्र खंडित होगा। इसलिये योगीराज कृष्ण कहते हैं कि ऐन्द्रिक उपभोग को नियंत्रित करो। जो प्रकृति के चक्र को अबाध बनाए रखने में बाधा डालता है वह पाप कर्म करता है। ऐन्द्रिक भोग के पिपासु पापी हैं। ऐसे अधम व्यक्ति की तुलना में पुरुषोत्तम ज्ञानी पुरुष प्रकाश सांभ हैं। वे किसी से घृणा नहीं करते (अद्वेषा सर्वभूतानां) प्रत्येक व्यक्ति के मित्र हैं। इसे गीता में 'सहृदः सर्व भूतानां' कहा गया है। वे सतत सर्व मंगल में तल्लीन हैं और गीता में इसे 'सर्वभूत हितै रताः' कहा गया है। जब हम सब का हित अपने सामने रखते हैं तब दोहन की अवधारणा सामने आती है। इसकी दो विधियाँ हैं। उदाहरण के लिये गाय के उपयोग को लें। गाय की हत्या कर उसके मांस का उपयोग किया जा सकता है। यह हत्या और विनाश है। जबकि गौ के दूध के उपयोग से इसे निरन्तरता दी जा सकती है। हम गाय की हत्या तो एक बार ही कर सकते हैं, किन्तु दूध से पोषण वर्षों तक प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये हिन्दू उससे दूध ही प्राप्त कर धन्य होता है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने मानवीय विकास के संदर्भ में कहा था कि सच्ची सभ्यता प्रकृति के शोषण पर विकसित नहीं हो सकती। यदि प्रकृति को बनाए रखा गया तो मानव अपना भरण पोषण स्वयं सुनिश्चित करेगा। दुग्ध प्राप्ति ही हमारे दोहन का लक्ष्य होगा। हमारे दोहन की प्रक्रिया कुछ ऐसी हो कि प्रकृति के

अतिरिक्त-उत्पादन का उपयोग कर हम अपने आपको समृद्ध करें।

### सफल व्यवहार -

यदि इस दर्शन को व्यवहार में नहीं लाया गया होता तो यह सब ढ़पोरशंखी विचार बना रहता। परन्तु ऐसा नहीं है। यह दर्शन केवल प्रस्तुत ही नहीं किया गया और न ही केवल सिखाया गया, बल्कि इसे हमने जिया है। धर्म ने दर्शन और आचार-विचार में सेतु का काम किया। धर्म ने मर्यादाओं की लक्ष्मण रेखा खींचकर करने योग्य और वर्जित का बोध कराया। धर्म में आस्था, विश्वास, परम्पराएँ, पूजा-अर्चना इत्यादि का समावेश होता है। यदि इसे सूचीबद्ध करने का उपक्रम किया जाए तो आश्चर्य होगा कि जीवन के इन विविध पहलुओं पर कितने विस्तार से विचार हुआ।

प्रतिदिन के जीवन में हिन्दुधर्म ने कितनी करने योग्य और न करने योग्य आचरण की मर्यादाएँ बनाई हैं। इन सबका संबंध पर्यावरण का सन्तुलन कायम रखने से है। इनमें से कुछ मर्यादाओं ने वन संरक्षण में भूमिका का निर्वाह किया। कुछ के कारण भूक्षरण रोका जा सका। हवा पानी को प्रदूषण से बचाने में कुछ ने कवच का काम किया। कुछ ने धरती को समृद्ध बनाया। विनाश की वर्जना ने भारत में जैव विविधता के संरक्षण में योगदान किया।

### प्रथाएँ और परंपराएँ -

प्रत्येक हिन्दू को आचार विचार का हर रोज अथवा कभी-कभी पालन करना अनिवार्य है। इनमें कई तरह की साधनाएँ सम्मिलित हैं। यह प्रक्रिया हमें याद दिलाती है कि प्रकृति हर रूप में पूजनीय है, शोषणीय नहीं। इससे प्रकृति के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है। इस तरह गाय, बैल, हाथी, घोड़ा, सर्प की भी पूजा की जाती है। पक्षी, सोन चिड़िया, कोयला, पेड़-पौधे तथा केला, पीपल, तुलसी जैसी वनस्पति हमारी पूज्य बन गई हैं। हमारी यह श्रद्धा प्राणी मात्र तक ही सीमित नहीं है, जल, पृथ्वी, पहाड़, नदी, औजार, उपकरण, वाहन, हथियार, पुस्तक, ग्रंथ, स्लेट-पट्टी, स्याही, चूल्हा, दीपक, बर्तन नाना प्रकारों में हम प्रकृति को पूज्य मानते हैं। जीवन व्यवहार में संपर्क में आने वाली वस्तुएँ भी हमारे नित्य अथवा कभी-कभार पूजन की परिधि में आ गई हैं। जब हम इन वस्तुओं को पूज्य मानते

हैं तो नैतिक दृष्टि से यह संभव नहीं रहता कि उन्हें क्षति पहुँचावें अथवा उनका दुरुपयोग करें। यह धारणा उनके संवर्धन की प्रेरणा है।

कर्म रूप धर्म तो लंबे समय से चला आ रहा है। इसने आस्था और विश्वास का विकास किया है। पर्यावरण को ठीक-ठाक बनाए रखने में इसने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इस तरह की परम्पराएँ, कृषि, बागवानी, निर्माण औषधि जैसे जीवन के हर क्षेत्र में विकसित हुई हैं।

जन्मजात परम्पराओं की तरह पुराने विश्वासों ने भी पर्यावरण संतुलन और जैव विविधता को कायम रखने में योगदान किया है। इनमें से कुछ का भले ही तार्किक आधार न हो, परन्तु लोग उनका अनुसरण करें, यह वांछित ही है, क्योंकि यह संवर्धन में सहयोगी है। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र में पहाड़ियों पर बने मंदिरों के इर्द-गिर्द आरक्षित वन हैं। इन्हें देवराई कहा जाता है। अब ये प्राचीन अभयारण्य बन चुके हैं। इनमें से किसी को पेड़ की टहनी तक काटने की अनुमति नहीं है। न ही यहाँ पक्षी या पशु का शिकार किया जा सकता है। यहाँ किसी तरह के हस्तक्षेप के बिना, प्रतिबंध की नीति का कड़ाई से पालन होता है। इससे वनस्पति के विकास में सहायता मिली है। जब पहाड़ी के ढलान पर से वृक्ष नहीं काटे जा सकते तब भूक्षरण और भूस्खलन रोकना आसान हो जाता है। हवा शुद्ध और ठंडी रहती है। सामान्य तौर पर इस क्षेत्र में जल का स्रोत बारहों माह प्रवाहित होता है। सघन वन पक्षियों, पशुओं को बसेरा देते हैं। इस तरह वहाँ प्रत्येक देवराई वनस्पति का भंडार है। जनविश्वास है कि यदि इस वन परम्परा से छेड़छाड़ की जाती है तो देवता दंड देंगे। यह आस्था है। भले ही यह अंधानुकरण हो, लेकिन इससे संवर्धन में मदद मिलती है।

### आध्यात्मिक मूल्य -

इसी तरह कर्म का विधि विधान तथा पाप की अवधारणा है। यदि कोई जीवित वृक्ष काटता है अथवा अकारण प्राणी को मारता है तो पाप का भागी है। वास्तविक रूप से कोई पापकर्ता कर्म के माध्यम से नरक में भोग भोगता है, यह औचित्य का प्रश्न है। औचित्य का प्रश्न हमेशा प्रभावकारक नहीं होता। परन्तु आस्था कारगर होती है। कई वस्तुओं को माँ अथवा ईश्वर का दर्जा देना ऐसा ही एक विश्वास है। पृथ्वी या नदी जड़ है। इस विश्वास के अनुसार वे माँ कैसे? परन्तु हिन्दू दर्शन ने उन्हें मातृत्व की श्रद्धा से महिमामंडित किया है। ऐसा होते ही



उनके प्रति दृष्टिकोण में बदलाव आना स्वाभाविक है। यह मंडन नारीत्व का आधिपत्य जमाने के लिए न होकर उसे दैविक सम्मान और महिमा प्रदान की जाती है। जिन पेड़-पौधों को ईश्वर तुल्य माना गया है, जो औषधि का स्रोत हैं, उन्हें देवताओं की नित्य पूजा हेतु घरों के आजू-बाजू में जानबूझ कर लगाया जाता है। यह भले ही देखने में सामान्य कार्य लगता हो, परन्तु हिन्दू विश्वास के अन्तर्गत इनका आध्यात्मिक धार्मिक मूल्य है। तार्किकों को भले ही अटपटा लगे, परन्तु उन्हें इस बात पर सहमत होना पड़ेगा कि सिर्फ बौद्धिक होकर अथवा तर्क का सहारा लेकर पर्यावरण संकट का समाधान नहीं हो सकता।

कदाचित, प्राचीन हिन्दुओं में मानव मनोविज्ञान की अच्छी दक्षता थी, इसलिये उन्हें जो बौद्धिक रूप से सही लगा, वह उन्होंने जनता के सामने भावनात्मक रूप से प्रस्तुत कर दिया अथवा उसमें धर्म या अध्यात्म का पुट दे दिया। भले ही लोग उसके तर्क और अध्यात्म को न समझ पाएँ। वे कुछ गुणीजनों का अनुकरण करते हैं या उनके कहे पर चलते हैं। ऐसे में भावनात्मक चंधन अथवा धार्मिक संरचना एक उपकरण के रूप में काम आती है, यही हिन्दू विश्वास है। धर्म को विशेष स्थान मिलता है। यह समग्रता को समेटता है। आम जन को मार्गदर्शक सिद्धान्त देता है और आध्यात्मिक विचार प्रदान करता है। इसलिये पर्यावरण की संरचना, करने योग्य कर्तव्य और वर्जनाएँ, पूजा, कृत्य, विश्वास धर्म का भाग बन गए हैं।

### त्याग-भोग का मेल

हिन्दुत्व त्याग के दर्शन पर आधारित है। क्या इसका यह अर्थ है कि भोग का कोई स्थान नहीं है? हिन्दुओं का निःश्रेयस में विश्वास है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उनका भौतिक जीवन अन्य मानव समाज से गौण है, इतिहास इससे मेल नहीं खाता। हिन्दू समृद्ध सांसारिक जिन्दगी जिये हैं। इस हद तक कि अन्य देशों ने उनसे ईर्ष्या भी की। यथार्थ यह है कि विदेशी यहाँ मिर्च-मसाला और सिल्क की खोज में आए थे। तब उनका प्रयोजन आध्यात्मिकता नहीं था। उन्हें हीरे की तलाश थी। वे यहाँ उच्च कोटि की वस्तुएँ तलाश रहे थे, देवता नहीं। हमारी पुरातन समृद्धि, विकास का यही प्रमाण है। अँग्रेजों ने यहाँ लूट की। इससे जाहिर है कि यहाँ लूट के लिए काफी कुछ था। यह सब कैसे संभव था? त्याग और भोग का मेल कैसे हुआ? यहाँ प्राचीन दूरदर्शियों का कौशल स्पष्ट दिखाई

देता है। वे महान लोग बहुत व्यावहारिक थे। वे कमियों, दुर्बलताओं और आम आदमी की सीमाओं को समझते थे। उन्हें मस्तिष्क बल और इन्द्रियों का ज्ञान था। यदि आवश्यकताओं को दबा दिया जाए तो मस्तिष्क और इन्द्रियाँ विद्रोह पर उतारू हो सकती हैं, इससे विकृति का जन्म हो सकता है, इसलिये यह बात बताई गई कि उपभोग को सर्वदा टाला नहीं जा सकता, परन्तु उसे नियंत्रित और मर्यादित किया जाना चाहिए। धर्म ने भी उसकी स्वीकृति प्रदान की है। उपभोग पर नियंत्रण व धर्म की मर्यादा मनुष्य स्वभाव को स्थाई बनाता है। यदि भोग मर्यादित होता है तब इस भोग में कोई नुकसान नहीं। इसकी स्वीकृति स्वयं कृष्ण गीता में देते हैं।

'धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ' जहाँ भोग धर्म की अवमानना नहीं करता, वह दिव्य है। इससे यह स्पष्ट है कि उपभोग का निषेध नहीं है, केवल वह सीमा में होना चाहिये। सीमा यही है कि प्राकृतिक पर्यावरण का अस्तित्व प्रभावित न हो। उपभोग के द्वारा भौतिक प्रगति भी नुकसानदेह नहीं है। वह प्रकृति को बाँधे रहती है इसलिये उपभोग का भी धर्म है।

### गौरवपूर्ण उपलब्धियाँ -

हम आश्चर्यचकित होते हैं कि इन सीमाओं में रहकर भी भारत ने कितनी उन्नति की। अतीत की उपलब्धियों पर सामान्य दृष्टि डालने से ही हमें अपने बीते युग के इतिहास पर गर्व होता है।

समृद्ध विश्व स्वीकार करता है कि शून्य की खोज हमने की। वास्तव में अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित में हमारा ज्ञान समृद्ध है। अन्य 'विशुद्ध विज्ञान' जिनका ज्ञान हमें है उनमें रसायन शास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, खगोल शास्त्र भी शामिल हैं। 'प्रयुक्त विज्ञान' की सूची लंबी है। इसमें धातु विज्ञान, औषधि, वास्तुकला, जहाज निर्माण, नौ-परिवहन, मंदिर निर्माण, सेतु, सड़क, बाँध, नहर, युद्ध विद्या इत्यादि सम्मिलित हैं। 'समाज विज्ञान' के विषयों में अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र जैसे विषय रहे हैं। सभी जगह परम्परागत शिल्पी काष्ठकला, लुहारी, सोनारी, तांबा-कार्य, भवन, शिल्प, बर्तन निर्माण, ईंट निर्माण, खाद्य अखाद्य तैल उत्पादन तथा चर्म, शिल्प आदि में निष्णात थे। हमारी सभ्यता कृषि आधारित है। आदिकाल से किसान कृषि में संलग्न हैं। इसके लिए कुछ विशेष औजार, उपकरण प्रयोग में आते हैं, जिनका रूपांकन और निर्माण निरक्षर कृषकों ने स्वयं किया है। उन्हें भूमि



पर बिना जल स्तर उठाए सिंचाई करने का ज्ञान रहा है। उन्हें जैविक खाद देकर उर्वरा शक्ति बढ़ाने का ज्ञान था। सांस्कृतिक जीवन में गद्य एवं पद्य का साहित्य भरा पड़ा है। कलाओं का भंडार है। चित्रकला, मूर्तिशिल्प, रंगाई, बागवानी और बुनाई भी इनमें शामिल रही। गायन, वादन, नृत्य, नाटक आदि कुछ प्रमुख कलाएँ रही हैं। संगीत के वाद्ययंत्रों की विविधता तो मनमोहक है ही।

### प्रौद्योगिकी और मानवीय चेहरा-

और स्मरण के लायक यह भी है कि प्रत्येक कला, विज्ञान के पूरक उसके औजार, उपकरण और साज-सामान होते हैं। जब हम कहते हैं कि हमारा चिकित्सा विज्ञान विकसित था, तो इसका मतलब है कि शल्यक्रिया में आवश्यक औजारों का विकास भी है। युद्ध विद्या का तात्पर्य यही है कि हमारी दक्षता उत्कृष्ट कोटि का फौलाद बनाने, उसे लौह फौलादी शक्ति प्रदान करने और उससे तलवार बनाने की थी। उससे तोपें गढ़ी जाती थीं और गोला-बारूद बनाया जाता था, कोलों का निर्माण होता था। इन तमाम हार्डवेयर के लिये साफ्टवेयर तकनीक और प्रौद्योगिकी थी। इससे यह भी आभास होता है कि तब जो प्रौद्योगिकी थी, वह पुरानी नहीं, किन्तु उच्च कोटि की अत्यन्त समृद्ध थी? उत्कृष्ट थी, लेकिन न प्रदूषण पैदा करती थी, न केन्द्रीकरण। वह प्रौद्योगिकी अत्यन्त सादगी पूर्ण थी, जहाँ बंधक बनाने जैसी बात नहीं थी।

### कृतज्ञतापूर्ण आमोद-प्रमोद -

जो व्यक्ति कला, विज्ञान, प्रौद्योगिकी के संचालन में संलग्न थे, उनके चेहरों पर विषाद नहीं रहा होगा। वे अपने जीवन में सभी ओर से सम्पन्नता के साथ अनुकूल रहे होंगे। उन्हें सृजन की सुखद अनुभूति रही होगी। प्रकृति की गोद में सादा जीवन उन्हें प्रफुल्लित करता रहा होगा। मस्तिष्क, शरीर पूरी तरह सृजन में लगे होने का आनन्द ही अलग रहा होगा। ऐसे कई अवसर रहे होंगे, जब वे एक साथ मिलकर आमोद-प्रमोद से आनंदित रहते होंगे। यही त्यौहार के अवसर रहे। इस तरह के त्यौहारों की सृजना हिन्दू संस्कृति की विशेषता है। होली, दीपावली, शरदपूर्णिमा और मकर संक्राति के उत्सव उनके अपने मौसम में प्रकृति की विशेषता और सौन्दर्य की ओर ध्यान आकर्षित करने का प्रयास था। इसके माध्यम से प्रकृति की सौन्दर्य के क्षेत्र में जो देन है, उसका आनंद मिलता था। इस सबने प्रकृति के प्रति लोगों को कृतज्ञ बना दिया।

### सौन्दर्य का दिव्यीकरण -

शायद ही कोई सभ्यता ऐसी हो जो हिन्दू सभ्यता की तरह प्रकृति के भंडार और सौन्दर्य का इस तरह आस्वादन करती हो। आम धारणा के विपरीत हिन्दू सौन्दर्य के प्रशंसक हैं। निस्संदेह कुछ आध्यात्मिक मान्यताएँ हैं, जो सौन्दर्य की पक्षधर नहीं हैं। उनका मानना है कि इससे मनुष्य पाश में बँधता है। आध्यात्मिक विकास में बाधा उत्पन्न होती है। परन्तु हिन्दू दर्शन ने अपूर्व दृष्टिकोण रखा, मौलिक पक्ष लिया है। उसने सौन्दर्य की उपासना की है। वास्तव में यह एक विशिष्टतापूर्ण हिन्दू दृष्टिकोण है।

सौन्दर्य और पूर्णता पर्यायवाची है। जिस तरह पूर्णता दिव्य स्वरूप है, जो भी सुन्दर है, उनके लिये दिव्यता ईश्वरीय है। इस तरह हिन्दू प्रकृति के सौन्दर्य को ईश्वर की कृति का सौन्दर्य मानते हैं। उन्होंने सूर्योदय, सूर्यास्त की सुषमा, पहाड़, वृक्ष, फूल, जल-प्रपात के सौन्दर्य को निहारा। उन्होंने फूलों की सुगंध को सराहा, उन्होंने स्फटिक धवल शुद्ध जल धारा में स्नान किया। फलों की मिठास का आस्वादन किया। पक्षियों के कलरव के गीत का आनन्द लिया। मेघ के गर्जन, बहते जल का निनाद सुना। यह सब उनके लिये ब्रह्म की अभिव्यक्ति थी। सौन्दर्य की दृष्टि यहाँ भोग नहीं, पूजा थी। अतः सौन्दर्य के सभी पक्ष पूजा के पात्र बने।

### इच्छाओं की दिशा

व्यावहारिकता के आधार पर जनसामान्य की इच्छाओं के प्रति सदाशय होकर धर्म ने सुन्दर वस्तुओं के उपयोग की अनुमति दी है। इस तरह व्यक्ति का सौन्दर्य निखारना आम आचार बन गया। लोगों ने सुगन्धित तेल का उपयोग किया। फूलों की सजावट और गहनों का प्रचलन हुआ। सौन्दर्य प्रसाधनों की भारत में समृद्ध परम्परा रही है। गहने, वस्त्र, केश विन्यास, इसी का अंग हैं। शरीर की तरह गृह की सुन्दरता के लिए सजावट का विकास हुआ। जब पूजा होती है तब अपने बैलों या वाहनों का शृंगार किया जाता है। यह सब बाह्य आनंद के लिये ही एक सीमा तक है। लेकिन इसका एकदम बहिष्कार नहीं किया गया। यह मनोविज्ञान के आधार पर अनुभूत बात है कि किसी को आध्यात्मवादी बनने के लिये विवश नहीं किया जा सकता। इसलिये उसे एक सीमा तक ऐन्द्रिक आनन्द उठाने की अनुमति है। इच्छाओं का दमन हानिकारक है। इसलिये जहाँ दमन संभव नहीं है, वहाँ तक उसे आनन्द की दिशा देना ही उत्कृष्ट आचार-विचार है।



**COLLECTION OF VARIOUS**  
-> **HINDUISM SCRIPTURES**  
-> **HINDU COMICS**  
-> **AYURVEDA**  
-> **MAGZINES**

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

**Made with**



**By**

**Avinash/Shashi**

**(creator of  
hinduism  
server)**



**KAPWING**



### बुद्धिभ्रम के शिकार हम -

सभी प्राचीन सभ्यताएँ समय के अन्तराल में आरोह में से गई हुई हैं। हिन्दू सभ्यता भी इसका अपवाद नहीं है। इसी तरह समय की दौड़ में कुछ उदासीनता छाई, कुंठा जगी, इस वास्तविकता को छिपाना नहीं चाहिए, अपितु खुलेपन के साथ स्वीकार करना चाहिए। कोई भी सामाजिक परम्परा सम्पूर्ण नहीं है। कितनी भी कठोर हो, त्रुटि होना नियति है। अतः कभी-कभी भोग का अतिरेक हुआ। कभी बाह्य सांस्कृतिक आक्रमण हुआ। इससे अच्छे विचार पिछड़ गए। हिन्दुत्व ने ये सभी धपेड़े झेले हैं और उसमें से प्रौढ़ता से उभरा है।

परन्तु, आज फिर हम गिरावट की ओर हैं। लगता है हम आध्यात्मिक मूल से अलग हुए हैं। इस भौतिकवाद के प्रवाह में बह चले हैं। अंग्रेज शासकों ने हमारा बुद्धिभ्रम कर दिया। उन्होंने हमें इस भ्रम का शिकार बना दिया कि हमारे यहाँ कुछ भी सही नहीं है। हमें श्वेत लोगों का अनुकरण करना चाहिए। यही सभ्य होने का तरीका है। जो उनके भौतिकवाद का शिकार बने, वे उनका अंधानुकरण कर रहे हैं। जिस तरह की समस्याएँ वे भोग रहे हैं, हम भी उनसे पीड़ित हो रहे हैं। व्यक्तिगत, सामाजिक और पर्यावरण के स्तर पर सभी ओर यही परेशानी भुगत रहे हैं। हम भूल गए हैं कि हमारा दर्शन अलग है, हमारा चिन्तन अलग है, हमारा आचार भी भिन्न है।

### अपने को पहचानें -

परन्तु यह एक विडंबना है कि जो देश भौतिक दृष्टिकोण के लिए बिखर चुका है, अपनी अंगुलियाँ जला चुके हैं, उनका अपनी तथाकथित तरक्की से भ्रमनिरास हो गया है। वे अब अपनी विपुलता जनित दुःखों से मुक्ति पाने के लिये तड़फड़ा रहे हैं। उन्हें स्थायी विकास के मॉडल की तलाश है। हम भारतीयों के पास पारस है। परन्तु हमने उसे रूढ़िवादी, कालातीत बताकर खारिज कर दिया है। पाश्चात्य लोग अपने भौतिकवाद से ऊब चुके हैं। वे पथ प्रदर्शन के लिये पूर्व की ओर टकटकी लगाए हैं। उनकी सोच है कि केवल आध्यात्मवाद ही मानव मात्र की समस्याओं का समाधान कर सकता है। और यहाँ हम ही उससे अलग हो रहे हैं। यह सही नहीं है। हमारे पास पारस है। हमें उसे पत्थर समझकर फेंक नहीं देना चाहिए। इसलिये यह बहुत आवश्यक है कि हम हिन्दू अपने दर्शन को समझें। अपनी विरासत को परखें। उसे सँजोकर रखें। हमें अपनी जीवन शैली

पर गर्व करना चाहिए। यह प्रकृति के अनुरूप है। यह कसौटियों पर खरी उतरी है। हमें भौतिकवाद के झंझावात में बह नहीं जाना चाहिये। हमें प्रकृति की मर्यादाओं में संतोष भाव से जीना चाहिए।

### हिन्दू क्षमताएँ -

भौतिकवाद का दार्शनिक आधार ध्वस्त हो चुका है। भौतिकवादी जिन्दगी से तमाम समस्याएँ पैदा हुईं और बढ़ रही हैं जिनका कहीं कोई समाधान नहीं है। उन समाजों और देशों को, इस तरह के उपायों की ओर जो नैतिक और स्थायी दोनों हों, बाध्य होकर आना पड़ रहा है। वे समाधान के लिये पूर्व की ओर देख रहे हैं। कुंठा, संक्रांस, ध्वंस से ग्रसित पश्चिम को पूर्व के दर्शन में आशा की किरण दिखाई दे रही है।

हिन्दुत्व में हर व्याधि का समाधान दे सकने वाली शक्ति और क्षमता है परन्तु इसके लिए पहले हम हिन्दुओं को उस जीवन दर्शन के अनुसार जीना होगा। दुनिया का पथ प्रदर्शन करना अतीत में भी हमारा पावन कर्तव्य रहा है और हर परिस्थिति में हमें वही कार्य करना है ताकि निकट भविष्य में विश्व पर्यावरण का संकट टाला जा सके।

हमें इस धर्म कार्य के लिये सुसज्जित होना है।

